॥ गोवर्द्धननाथो विजयतेतराम ॥

* श्री गोवर्द्धन ग्रन्थ माला का बत्तीसमाँ पुष्प *

श्रीगुसाईंजी के चतुर्थ कुमार मालातिलक रक्षणहार

श्री गोकुलनाथ जी के २४ वचनामृत

(श्री अष्टोत्तरशत नाम तथा माला प्रसङ्ग के कवित्त सहित)

सम्पादक :
निरंजनदेव शर्मा

...र्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय
...जी घाट, मथुरा !

प्रथमबार [illegible] अक्षय तृतिया २०२२ { न्यौछावर १ रुपया

॥ श्री कृष्णः शरणं मम ॥

दयासागर प्रभू श्रीगोवर्द्धननाथजी हम सेवक यह बत्तीसवीं
पुष्पांजलि चरणारविन्द में समर्पण करने लाए हैं।
श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला रूपी इस वाटिका में
नवीन नवीन पुष्प विकसित होते रहें।
हम सेवकों की यही भावना है।

—: हम हैं आपके दासानुदास :—

निरंजनदेव शर्मा
व्यवस्थापक

सुरेन्द्रकुमार B.A.B.T.
संरक्षक

शंकरलाल शर्मा
प्रधान प्रचारक

सोहनलाल शर्मा
सदस्य

श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला समिति

प्रथम संस्करण १०००] [न्यौछावर १ रुपया

याद रखिए—पुष्टि-मार्गीय एवं व्रजभाषा साहित्य और
समस्त प्रकार की धार्मिक पुस्तकें मिलने का
एकमात्र स्थान—

श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजीघाट, मथुरा

व्यवस्थापक—निरंजनदेव शर्मा का सादर भगवद् स्मरण

मुद्रक : बैजनाथ दानी ने लोक साहित्य प्रेस, मथुरा में छापा।

ाला-तिलकके तारणहार-दिग्विजया-विजेता-श्रीगुसांईजा के

चतुर्थ कुमार—

श्री गोकुलनाथजी कृत

२४ वचनामृत

॥ मंगलाचरण ॥

नमामि गोकुलाधीशं लीलामानुषबिग्रहम् ॥
व्रजाधीशं विश्विविभुं पार्वती प्राणवल्लभम् ॥१॥
मायावादि चिद्रूपादि प्रतिबंध निवारकः॥
दर्पहा दुर्मदांधानां पायाद्वो भक्त भूषणः ॥२॥
नमामि श्रीपतिदेवं वल्लभं वल्लभातमजं ।
य; करोति सदाऽरण्ये मंगलं जनवर्जिते ॥३॥
जयति विट्ठलसुवन प्रगट वल्लभवल्लो ।
प्रबल पनकरी तिलकमाल राखी ॥४॥

वन्देऽहं गोकुलाधीशं भगवंतं कृपानिधिं ।
पावनो या मुनेजातः कलौघोरे द्विजेषुयः ॥१॥
नमामि गोकुलाधीशं लीला मानुष विग्रहम् ।
ब्रजाधीशं विश्वविभुं पार्वती प्राणवल्लभम् ॥
जहांगिराद्रच्छिता मालाद्यधर्माद्रच्छिताजनाः ।
चिद्र पाद्रच्छिताधर्मो पातुवः पार्वतीपतिः ।

नमामि श्रीपतिदेवं वल्लभं वल्लभात्मजं ।
यः करोति सदारिण्ये मंगलं जन वर्जिते ॥१
मायावादि चिद्रु पादि प्रतिबन्ध निवारकः ।
दर्पहाढुर्मदांधानांथयाव्दो भक्तभूषणः ॥२॥

श्री गोकलेशजी घर के रके सेवको को मंगलाचरणके
इस श्लोक का मुख्य पाठ करना चाहिये ।

एक समय पुष्टिमार्गीय सिद्धांत श्रीगोकुलनाथ जीने श्रीगुसांईजीसों पूछयो,तब श्रीगुसांईजी चाचा हरिवंशजी तथा नागजीभट्ट आदि अनेक भगवदीयन के अर्थ श्रीगोकुलनाथजी प्रति आप अपने पुष्टिमार्ग को सिद्धांत श्रीमुखसों कहें,सो सुनिके चाचा हरिवंशजी तथा नागजीभाई आदि अँतरंग भगवदीय अपने मन में बहोतही प्रसन्न भये,तापाछें श्रीगोकुलनाथजी आप अपनी बैठकमें पधारे,सो श्री गुसांईजी के वचनामृत को अनुभव सिद्धांत् अपने मनमें करत हते, ता समे श्रीगोकुलनाथजी के सेवक कल्याणभट्टजी ने आयकें श्रीगोकुलनाथजीसों दंडो किये,तब श्रीगोकुलनाथजी बोले नहीं, आपुतो पुष्टि मार्गीय सिद्धांतके रसमें मग्न होइके अनुभव करत

हें,तब कल्याभट्टजी हाथ जोर कें ठाडे होय रहे,तापाछे चारघडी मेंश्रीगोकुलनाथजी उँची दृष्टिकरिकें कल्याणभट्टकी ओर देखे, तब फेरि कल्याणभट्टने दंडवत किये,तब श्रीगोकुलनाथजी आप कल्याण भट्टसों-आज्ञा कीये, जो तुम कबके आये हो, तब कल्याण भट्टजी ने आपसों विनती कीनी जो महाराज मोकों आये तो चार घडी भइ हे, तब श्रीगोकुलनाथजी प्रसन्न होयकें श्रीमुखसों आज्ञा कीये,जो आज श्री गुसांईजी अपने पुष्टिमार्गको सिद्धांत मोसों कहे हें सो पुष्टिमार्गकी-रीति तो महा कठिन हें,सो बनत नाहिं हें,तब कल्याणभट्टने श्रीगोकलनाथजी ते विनती कीनी जो महाराज कछु हमारे लायक होयसो कृपा करिकें हमसों कहिये,हमको आपके श्रीमुख के वचन सुनिवेको महामनोरथ हे,और पुष्टिमार्गकी रीतितो बननी महा कठिन हे,परन्तु हमको सुनिवे कोहु अति दुर्लभ हे,यह वचन सुनिके, श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्टके उपर बहोत प्रसन्न भये,तब श्री गोकलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति आज्ञा किये,जो यह-

वार्ता ओरके आगे कहिवेकी नहीं हे, तुम भगवद् भक्तहो और तुमको पुष्टिमार्ग की रीति सुनिवे में अत्यंत प्रीति हे,तातें में तुमसों कहतहों, सो मन लगायकें सुनियो, तथा हृदय में धारण करियो.

अब श्रीगोकुलनाथजी भगवदीयके लक्षण तथा पुष्टिमार्गीय सिद्धांत कल्याणभट्ट प्रति कहत हें:-सो प्रथम तो अन्याश्रय न करनो. अन्याश्रय महाबाधक हे. ओर आश्रय तो एक श्रीनाथजीको ही करनो सो आश्रय सिद्ध भयेतें, सर्व कार्य होत हें, और यह लोकमें सब ठिकाने सुख पावत हें.सो यह जानिकें आश्रयतो एक श्रीजीको ही करनो. सो आश्रयकोहेत यह हे जो अपनेप्रभु विना ओर काहुको न माने, ओर दूसरे सों भूलके मनोरथ न करे, ओर अन्य अवतारनकी अपेक्षा न राखें, जीव तथा देह काहुकी अपेक्षा न राखे तातें यह बाततो बहुत कठिनहें.सो काहे तें,जो यह संसार तो वृक्ष रुपहें.ओर या संसाररुपी वृक्षमें दोयफल हें, दोयफल कौन-कौनसे, एक तो सुख,एक दुःख. सो दोयफलमें लगतहे,और ससाररुपी वृक्ष की शाखा

तो अनेक हे, तिनकी शाखा सो मनके तरंगहैं, और वृक्षहे ताकोमूल जड हे, सो बुद्धि हे, और फल हे, सो अपने गिरवेसों डरपतहे, सो है मोह रुपीवियार के डरते डार शाख फल फूल टुटनते डरतहें, और अपने मुख्य तो वृक्ष की जड हे सो दृढहे, तातें वृक्ष को डर नाहीं हे.सो डार शाखाफल पत्रअपने मूलको द्रढ जानत नाही हे, तातें, अत्यंत भय करिकें दुखित होत हें,तेसेइ यह जीव हें, संसाररुपी वृक्षकु मोहरूपी वयारको डर हे, ताको दुःख दूर करवे को अपने मूल को विचारनो,जो अपने मूल तो श्री भगवानहें, तिनको जानत नहीं तातें अपने मूलको भूलि गयो हें, और या अविद्या करिकें एसो विचार रहत नाहीं, जो हमारो मूल भगवान हे. सो सर्वोपर द्रढ हे. हमको या मोहरुपी वियारकी चिंता नाहीं हे, इतनी बुद्धि दुष्ट स्वभाव करिके, जीवको रहत नाही हे, क्योंकि मोहरुपी वयारके डरतें डरपत हें, और या संसारमें अनेक प्रकारके दुःख सुख पावत हें. तेसेइ या मनुष्यको या संसारमें अहंता ममतात्मक वृक्षरु-

पी हे, और डार याको कुटुंब हे, और शाखा या की स्त्री पुत्र परिवार हें, पत्र मनके तथा-देह संबंधी अनेक मनोरथके तरंग हें, ओर फल तो दोय सुखदुःख हे, ओर मूल याके भगवान हे. ऐसे अविद्या करिके मोहरुपी वयार लागे हे तब अपने मनमें अत्यन्त भयभीत होत हें, ओर अपने मनमें कहे हे, जो या वियारतें गिरुंगो, यह संसार के भयकरिके अपने मूल भगवानको भूल गयो हे, और अपने कुटुंबरुपी डार शाखासों लपटात हे, और उनसों मिलिके अनेक प्रकारके दुःख सुखको अनुभव करत हे, यह वृक्षरुपी मनुष्यको मायारुपी अविद्या लागी हे, तातें मोहके वश होयके डरपत हे, जो मेरे कुटुंब स्त्री पुत्रादिक को दुःख होयगो. यह चिंता याको मोहरुपी वयार लागेतें होत हे, तातें अपने मूल भगवान हे, सो द्रढ हें सो मोको लौकिक अलौकिक चिंता नाहीं हें सो भुलि जात हें. तब लौकिक कुटुंब मिलि के याको अन्याश्र करावत हें. सो या प्रकार करत

और लौकिक में कोइतो कहत है, जो तुम

कोई देवता को मनावो तुमको सुख होयगो, तुमारो भलो होयगो, और कोइ कहतहे, जो तुमारो मित्र भलो होय तो मिलेगो, तब तुमारो कष्ट दूर होयगो और कोई कहत है जो देवीकी मानता करेतें भलो होयगो, यह दुर्बुद्धि जीव एसे करत हे, तब यह जीव अन्यश्रय करत हे,सो ज्यों ज्यों करत हे त्यों-त्यों श्री ठाकुरजो सों दूरि परत हे, सो अन्याश्रय करिके भगवानतें बहिर्मुख होत हे, और मोहरुपी वयार कैसी हे जो जीवको भ्रम उपजावत हे. और द्रढ अनन्य भक्तहे सो तो अन्याश्रय सर्वदा नही करत हे और जबकछु लौकिक सुखदुःख जीवको होत हे तब यह द्रढता राखत हे, जो श्रीजी करेंगे सो होयगो. में तो दास हों. सुख-दुःख तो देह के प्रारब्ध सों होत हे, सो देहकूं भोगेतें छुटेगो. एसी द्रढता राखनी, एसी द्रढता राखतहे, तिनको दुःख तत्काल निवृत्त होत हे. प्रथम तो भगवदियकों दुःख नाहिं होत हे, और होत हे, सो पाछिले प्रारब्धसों होत हे,सो भगवदीय मानत नाहीं या प्रकार द्रढ-

आश्रय श्रीठाकुरजीको करे ताकों भगवदीय कहिये, ओर जों वैष्णव होयकें अन्याश्रय करत हें, और असमर्पित वस्तु खात हें, तासों श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी बहुत दूर रहत हें, यह निश्चय जाननो. सो यह समझिकें वैष्णव को यह योग्य हें जो अन्याश्रय न करनो. असमर्पित न खानों, तातें अपने मन में दृढ आश्रय एक श्रीजीको ही करनों, तब वैष्णव या लोक परोलोक में सुख पावें. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हे

इतिश्री गोकुलनाथजीकृत प्रथम वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत दूसरो

अब दूसरो वचनामृत श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहत हें:—जो वैष्णवकों प्राणी मात्र उपर दया राखनी, जो कुंजरतें चेटी पर्यंत सबमें एकही जीव जाननों, छोटे बडे सब जीव प्रभुके हें, अन्तर्यामी सबमें एक ही हे, और प्रतिबिंब न्यारे न्यारे दीसत हें, यह जानके भगवदीयकूं हिंसाते अत्यंत

डरपत रहेनों, आपनतें शीत उष्ण सबमें विचारत रहेनों, और काहुको हृदय कल्पावनो नहीं, वचन, मन, देहतें सबको भलो करनों, आपको बचन मन देहतें न्यारो रहेनो. सुख दुःखतें रहित रहे, तातें वैष्णव होयकें प्राणी मात्र उपर दया राखनो. यह श्रीगोकुलनाथजी वैष्णवकों आज्ञा कीये हें. ।

इतिश्री गोकुलनाथजीकृत दूसरो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत तीसरो

अब तीसरो वचनामृत श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्टसों कहतहे.:—जो वैष्णवकों सदा प्रसन्न रहनों, और दुःख सुख दोउनको एक बराबर करिके जाननों. सुखतें हर्ष होय. और दुःखतें कलेश होय सो न करनों. और वैष्णवतें दीन होय प्रीति राखें. और अहर्निश श्रीजी का ध्यान राखें, द्रव्यादिकक्कुं सुमार्गमें, गुरुसेवा, वैष्णव सेवामें उडावें और अपने शरीर भोगार्थ न उठावें. और लौकिक वैदिक आवश्यक होय

तो संकोच सहित प्रभुकों दिखाय आज्ञा लेइ उठावें. और वैष्णव पास मान छोडिकें जाय, और निःशंक होयकें भगवद्स्मरण करे जहाँ भगवद् वार्तामें संकोच होय, तहां भगवद्धर्म न बढे, और संदेह रहे, ताते संदेहकी निवृत्ति होय तहां प्रीति बढे और ज्ञान होय, और काहुको बुरो न होय, दुःखमें धीरज धरें. ताको उत्तम वैष्णव जाननो, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा कीये हें ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत तीसरो वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत चौथो

अब श्रीगोकुलनाथजी वैष्णवनको चोथो लक्षण कहत हें, जो भगवदीय को क्रोध न करनो, ताको कारण यह है, जो क्रोध हे सो चांडालको स्वरूप हे. सो जहां क्रोध होय तहां भगवद्धर्म तथा भगवान न रहें, क्रोध होत हे तब भगवद्भाव जात रहत हे. और क्रोधहे सोअग्निरूप हे,भगवद् धर्मको नाश करत हे. जाको बहुत होतहे, सो क्रोधावेशसें अशुद्ध रहत हे, जैसे चांडालके स्पर्शतें सचैल स्नान

करनों पडे एसो ए दुराचारी हे. सो क्रोधतें जीवकों सचैल स्नान करनों पडे, नहि तों हाथ पाँवतों धोवनो, और सोल्हे कुरला (कोगला) करनो, चरणामृत लइ मनमें शांत होय तब क्रोधावेशतें छुटे. तातें भगवद्धर्म, भगवद्स्मरणपवित्र होय के करें, और क्रोधावेशमें देह छूटे तो नर्क में पडे, तथा अधोगति होय, क्यों जो. "तामसानां अधोगतिः"।

और विना कारण, भगवद्सेवा संबंध विना क्रोध करे तो श्वान योनि पावे. और लोभतें काहुको द्रव्य चुरावे और पूछेतें क्रोध करत हें, सो सर्प योनिकुं पावत हें, और कोई वैष्णवसों ईर्षा करके भगवद्धर्म. कीर्तन आदिमें प्रतिबंध करिकें छुडावें सो वह कुंभीपाक नरकको कींडा साठ हजार वर्ष तांइ होत हे, पाछै सूकर, कूकर, सर्प इत्यादिक योनिकुं पावै हें. ताते भगवद्धर्म संबंधी वार्ता साधारणहु होय तामें वघ्न न करनों, और जो क्रोध ईर्षा करिकें काहुके घरमें अग्नि लगावत हें सो तीनो पाप करिकें नर्कमें पडत हें. और इर्षा तथा क्रोधतें काहुको विष देत हें.

अथवा जलमें डुबावत हैं. तथा शस्त्र ले अपघात करत हैं. सो नर्क भोगके सर्प योनिकुं पावत हैं. तिनसों दशगुणो प्रायश्चित करत हैं, तब शुद्ध होत हैं. क्रोध सबरे धर्मनमें बाधक हैं. महा दुर्बुद्धि होय के अज्ञानतें करत हैं. तातें मन लगायके क्रोधको निवारण करनो. सो भगवद् इच्छारूपी खडगतें दूर करे. और क्रोध करिकें गुरुकी निंदा करे, तथा कठिन वचन बोले सो मूसक होय. पाछें सर्प योनिकुं पावे हे. ता पाछें प्रेतयोनि पावत हे. और भगवद् अर्थ विना माता पिता सों क्रोध करत हे सो दरिद्र होत हे. और वैष्णवसों क्रोध करत हे तिकनो सगरो सुकृत धर्मको नाश होत है. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी आप कल्याणभट्टसों आज्ञा किये हैं. सो क्रोधको महा दोष हे. सो कहेते पार न आवे, तासों यासों सावधान रहनो. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत चतुर्थ वचनामृत संपूर्णम्.

✲ वचनामृत पाँचमो ✲

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति

वैष्णवनकों पांचमो लक्षण कहत हैं. जो वैष्णव होयके एक श्री भगवानकोही आश्रय जाने. और भगवद्सेवा विषे एकाग्र चित्त राखे, परम फलरुप जाने, और लौकिक वैदिकमें मनकी चंचलता न राखे. और श्रीजीको स्वरुप श्रीभागवतमें तथा पुष्टि-मार्गीय ग्रंथनमें कह्यो है, सो तिनको दर्शन करि ध्यान हृदयमें राखे. जैसे भगवद्नाम स्मरण करे. तैसेही अपने गुरुके नामको हृदयमें स्मरण जप करे. भगवद् कटाक्ष. अंग. वस्त्र, आभरणमें अपनो मन लगायके चिंतवन करे, तथा अनेक लीला हैं तिनको चिंतवन करे. और भगवदनाम विना जो क्षण जाय तो हृदयमें उसास, लैके ताप करे. और अस्पर्शमें स्नान करि, चरणामृत तथा श्रीयमुनाजीकी रज मुखमें मेले, दोउ नेत्रनसों लगाय माथे धरे, हृदयमों लगावे, तब अलौकिक दृष्टि होय, तब भगवद्धर्म माथे विराजे, तब हृदय शुद्ध होय, और भगवद मंदिरमें जाय तो छोटी मोटी सेवा अपनो भाग्य मानिके करे. पात्र मांजे, मंगलभोगधरि सज्या फेरिके सँभारे, मंगल

आरती कर, तिथि वार उत्सव देखि अभ्यंग करावे, और जैसो स्वरुप तैसो पुष्टिमार्ग अनुसार, तिथि, ऋतुके अनुसार सिंगार करे, और सेवा सिंगार विषे चित्तको उद्वेग संकल्प विकल्प न करे. और अपने मनमें अपराध को भय राखे. श्रीमहाप्रभुजी की कृपा तें अपनो भाग्य, जानिके सेवा करे.मंगला, राजभोग, उत्थापन, सैन कराय सांकर, तारो लगाय, वस्तु सामिग्रीकी चोकसी राखे, पाछें रात्री को वैष्णवनसों मिलिके भगवद्वार्ता कीर्तन अवश्य करनो. और कोइ वैष्णव न मिले तो, एतन्मार्गीय ग्रंथनकी टीका देखे. एतन्मार्गीय वैष्णवमें जायके वार्ता करे, सुने. जैसे सेवामें आलस्य न करे तैसे वैष्णव मिलाप में आलस न करे. दोउ होय तब भक्ति बढे. जो भगवद् सेवा न बने तोहु वैष्णवको संग न छोडे. तो दैन्य होय. या प्रकार श्री श्रीगोकुलनाथजी वैष्णवसों आज्ञा किये.।

इतिश्री गोकलनाथजीकृत पंचम वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत छट्ठमो

अब श्री गोकुलनाथजी छट्ठमो लक्षण कहत हें, जो वैष्णव सेवा, भगवदस्मरण, भगवदधर्म इनमें पाखंड न करनो. और काहुके दिखायवेके अर्थ, पूजा अर्थ उद्धारार्थे न करे, आपनो सहज धर्म जानें, जैसे ब्राह्मण गायत्री जपे. लाभ संतोषसु सेवा करे, "एक कालो द्विकालो वा" और विवेक विना पूजा, सेवा करे तो नर्कमें पडे, और पाखंडीकी पूजा, सेवा, प्रभु अंगीकार न करें. या प्रकारसों श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हें. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत छट्ठमो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत सातमो

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति वैष्णवनसों सातमो वचनामृत कहत हें:-जो वैष्णव होयके काहुको अपराध न देखे. अथवा सुनेहु नहीं. यद्यपि काननसों सुने ओर आंखनसों देखे परन्तु

मनमें रंचकहु न लावे. यह जाने जो में मायावाद रुपी अविद्यामें पर्यो हुं. सो मोकों दोष दीसत हे. इनमें रंचकहु दोष नहीं हे. उत्तमोत्तम देखे. मध्यम देखकें कहें. दुष्ट झूँठी सांची लगाय ईर्षा करे. कोईसों खोटो काम करें, अपराध करे तोहु वाको भूलि जाय. वाको प्रसन्न करिके संकोच छुडावनो. भलो कार्य होय सो गुणकों प्रकाश करें. या प्रकार चले तो प्रभु कृपा करिके अपनी भक्तिको दान करें सो या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त कहत हें. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत सप्तम वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत आठमो

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति आठमों लक्षण कहत हें:-जो वैष्णव होय सो साचो होय, और लौकिक अलौकिकमें कपट न राखे. और भगवदीयसों मिथ्या न बोले, उनकी टहल सेवा करे, उनसों भगवद् चर्चा करे, उनके हृदयको भाव

तथा पुष्टिमार्ग को सिद्धांत अपने हृदय में धारण करे. और वारंवार अपने मनमें विचारे. भगवद् वार्ताको हेतु समजे. भगवदीय सों दीन व्हे रहेनो, और भगवदीके आगे अपनी बडाई न करनी, और आज्ञा उल्लंघन न करनी, उनसे स्नेह बहुत राखनो, श्री ठाकुरजीको लीला वार्ताको प्रकाश न जानत होय तो दीन होयके भगवदीयसो पूछनो, अपनी योग्यता न बतावनी, उन भगवदीयन के आगे भगवद्वार्ता चर्चा करनी. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति आज्ञा कीये हैं. ।

इति श्री गोकुनाथजो कृत अष्टम वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत नवमो

अब श्रीगोकुलनाथजी ओरहु आज्ञा करत हैं:- जो कोउ निंदा दुर्वचन कहे ताको उत्तर न देनो, सब सहन करनो, अपनें में दोष जानि उनसों क्रोध न करनों. अपने मनमें खेद न करनो, और उनसो

बहुत विरोध होय तो नेक दूरि रहेनो. उनके कृत्य देखिकें दोष बुद्धि रंचकहु न करनी, उनसो जयश्रीकृष्णको व्यवहार राखनो. उनकी निंदा न करनी. या प्रकार वैष्णवनके अपराध ते डरपत रहेनो. एसे डरपत रहे ताको सर्व कार्य सिद्ध होय. प्रभु कृपा करिकें हृदयमें पधारें. निंदा सहनी. यह वैष्णवनको सर्वोपर परम धर्म हे. या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति आज्ञा कीये हें. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत नवमो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत दशमो

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी वेंष्णवकों दसमों लक्षण कहत हें:-जो श्रीठाकुरजी की सेवा काहुके भरोंसे न राखे. अपने सेव्य स्वरूपकी सेवा आपही करनी. और उत्सवादि समय अनुसार अपने वित्त अनुसार वस्त्र, आभूषण, भांतिभांति के मनोरथ करि सामग्री करनी. श्रीठाकुरजीके यहां नित्य नौतम उत्सव जानि प्रसन्न रहनो, अमंगल उदासीन कबहु न रहनों. और सामिग्री जा उत्सव में अपने घरकी जो

रीतिहे, सो रीति प्रमाण यथाशक्ति करनी. जो द्रव्य होय सो श्रीकृष्णके अर्थ लगावनो, कृपणता नाहीं करनी. और भगवदसेवा करिके श्रीठाकुरजीतें कछु माँगनो नाहीं. यारीति सों निष्काम होय के श्रीठाकुर-जीकी सेवा करनी. और जो सूतकी होय, वृद्धि होय, रोगादि प्रतिबंध आय पडे तो, अपने सुजाति वैष्णव पें सेवा करवावनी. और सुजाति वैष्णव न होय तो मर्यादी वैष्णवको कछु द्रव्य देके सेवा करावनी, और जो मरजादी वैष्णव न होय तो समर्पनी पें सेवा क-रावनी, और समर्पनी वैष्णव गाममें न होय, तो ना-मधारी वैष्णव सों पट वस्त्र थैली हाथमें पहरायके श्रीठकुरजीकीसेवा करावनी, साक्षात् श्रीठाकुरजीको स्पर्श न कारवनों,और याके हाथकी सखडी अनसख-डी श्रीठाकुरजी आरोगे परंतु आप न लेय.परंतु आ पुनको बडो प्रतिबंध आयपडे तो लेनों.और प्रतिबं-ध छुटे तब एक ब्रत करे, तथा भेट काढे, तब श्रीठा-कुरजी को स्पर्श करनों. और अन्य मार्गीयपें श्री-ठाकुरजी की सेवा न करावे.नामधारी न मिले तो आ पुई पट वस्त्रसों कोरी सामग्री धरे.श्रीठाकुरजी पोढेंहीं

आरोगे. परंतु सेवा ओरसों सर्वथा नाहीं करावनी. जो शरीर सर्वथा न चले तो श्रीठाकुरजीको गामके वैष्णव तथा और गामके वैष्णव होय तिनके घर पधरावने. और मन करिकें ताप करे जो भगवदसेवा न भई, तातें मन लगायके मानसी सेवा करनी. या प्रकारसों सेवा पहिले करी होय ताहि प्रकारसों सेवा करनी. और मानसी सेवा को प्रकार यह हे, जो अपने मनमें श्रीठाकुरजीको ध्यान करिकें श्रीठाकुर-जी, श्री आचार्यजी, श्रीगुसांईजीके बालक जिनसों समपर्ण कियो होय सो गुरुदेव, श्रीजी तथा सातो स्वरुप अपने गुरुके सेव्यरुप होय तिनको नियमपूर्वक अंतः करणसों दंडवत् करनों, पाठें मनही करिके मंगलभोग धरि मंगला आरती करें, पाछे अभ्यंग स्नान, अंगवस्त्र आभूषण ऋतुके अनुसार धरावे. या प्रकार राजभोग उत्थापन, सैन पर्यंतकी सेवाकी भावना करनी, परंतु मनमें संतोष न राखे, यह जाने जो मोसों साक्षात् हस्तसों सेवा कब करावेगें, सो भगवद सेवामें एकादश इन्द्रियनको विनियोग होत.

हे, यह ताप करे. या प्रकार सों रहे, सो उत्तम वैष्णव हे, या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हें, ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत दसमो वचनामृत संपूर्णम्

* वचनामृत ग्यारहमो *

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी ग्यारमों लक्षण कहतहें:- जो वैष्णव होय सो प्राणी मात्र उपर दया राखे, और वैष्णव अपने घर आवे तो प्रसन्न होय रहे, और जाने जो वैष्णवद्वारा प्रभु पधारे हें, यह जानि तेल लगाय, ताते पानीसों न्हवाय, सुंदर ऋतु अनुसार वस्त्र पहिराय, नाना प्रकारके महाप्रसाद लिवावे. जो सामर्थ्य होय तो समयके सनमान करि प्रसन्न करनों, और काहुको ऋण काढिके न करनो, ऋण हत्या बराबर हें, काहुको दुःख देकें काय न करनो. यह भावसों वैष्णवको रहनों, और अन्य मार्ग के श्रीठाकुरजीकी सेवा न करनी, और विना मर्यादी के ठाकुर अपने श्रीठाकुरजी पास न बैठावनें, अपने श्रीठाकुरजीकी सामग्री विना मर्यादीको न देनों, प्रमादी होय सो विना मर्यादीके श्रीठाकुरजी आगे

भोग धरनों, सो प्रसाद मर्यादी न लेय. लीलाको भाव अन्यमार्गी तथा पात्र, विना न कहनों. पुष्टिमार्गमें अनन्य होय तासों मिलिके निवेदनको तथा लीलाको भाव स्मरण करनों, और अपनें गुरूने मंत्र दियों होय, अष्टाक्षर, पंचाक्षर, तिनको प्रकाश जहां तहां पात्र विना न करनो, अपने श्रीठाकुरजीकी सेवा जहां तांइ बने तहां तांइ ओरके घर न पधरावनी, अपने घर सेवाको सौकर्य सामर्थ्य न होय तो और के घर जाय दोय घडी सेवा करें, परंतु रंचकहु नियमपूर्वक करनी चाहिये, तैसेइ भगवदीयको संग हु नियमपूर्वक करनो. चाहिये. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्टप्रति पुष्टिमार्गीय सिद्धांत कहेहें.।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत एकादशमों वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत बारहमों

अब श्रीगोकुलनाथजी द्वादशमों वचनामृत कहतहें:—जो वैष्णव अपने सेव्य स्वरुपको साक्षात् पुरुषोत्तम जानिकें सेवा करनी, और अन्यमार्गीयके ठाकुरकों अपने श्रीठाकुरजीके बराबर न जानें. और हर-

तात्पर, वस्त्रसेवा, चित्रसेवामें अन्य भाव न जानें, सा-
क्षात् जानि अपराधको भय राखे, गृहस्थ धर्म सेवा
अर्थ जानें, अपने सुख अर्थ न जानें, और अपनी
देह अनित्य जानें, श्रीठाकुरजी की देह नित्य जाने,
श्रीठाकुरजीकी देह तथा भगवदीयकी देह अनित्य
करि जाने नहीं. लौकिक सुख तुच्छ जाने, भगवद से-
वामें प्रीत राखे तिनसों प्रीति विशेष राखें, इतनी लौ-
किक वैदिक वस्तुमें न राखे, पराई वस्तु, पराई सत्ता
होय तामें लोभ न राखे, कछु प्राप्त भये तें सुख न
मानें, कछु हानि भये तें दुःख न मानें. गृहस्थधर्मके
शास्त्र काहु सों सुनिकें लौकिकमें लीन होय न जानो,
पुष्टिमार्गीय संबंधी शास्त्रके वचनको विचारत रहे-
नो. और सब शास्त्र पुष्टिमार्गते अंतराय करवे बारे,
हें, यह निश्चय जाननो. और भगवदकार्य, गुरुकार्य-
वैष्णवकार्य में मन राखें. जैसे जलतें कमल न्यारो
हे, तैसें लौकिक वैदिकते न्यारो रहे और श्री भाग-
वत तथा श्रीआचार्यजीके ग्रंथनको भगवद् स्वरूप
जानें. और श्रीसर्वोत्तमजीको पाठ तथा जप मन ल-

गायके करनो, यह पुष्टिमार्गीय वैष्णवकी गायत्री हैं. तातें सगरे प्रतिबंध दूर करि पुष्टिमार्ग को फल पावे, और श्रीयमुनाष्टक आदि पाठ नित्य करने,और सर्वोत्तमजी को पाठ जप नियमपूर्वक करनो, गद्य के श्लोक को भाव विचारि केताप क्लेश करनो. और सदा पवित्र रहनों. कुचैल मनुष्य को छुहुवेउकी ग्लानि राखे, वैष्णव के वस्त्र में बहुत ग्लानि न राखें अलौकिक देहसों लग्यों रहे, और काहुके दिखायवे के लिये बड़ी अपरस न राखे. और जहां तहां विचारे विना खान पान न करनों, या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा करत हैं. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत द्वादसमो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत तेरहमों
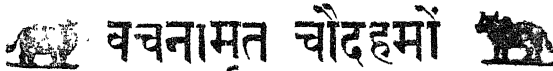
अब श्रीगोकुलनाथजी तेरहमो लक्षण कहत हैं:- जो भगवदीय वैष्णव को काहुसों विरोध न राखनों, और जहाँ क्रोध की वार्ता होय तहाँ ठाड़ो न रहनो, और सबनसों सर्वात्म भावसो हित राखनों. उनकी बात झूंठी होयसो अपने कहेतें खेद पावे सो-

न कहनो. और साँची कहेते खेद पावे सोहु न कहनो. याही प्रकार विवेकपूर्वक चलनो, ताको भगवदिय कहिये. और वैष्णवकी निंदा करे, तो नरकमें पड़े. तहां विचार हे जो वैष्णव कुमार्ग चले तो समझावनो, मनमें दोष लायके निंदा न करनी, अथवा मार्ग की रीतिसो विपरीत चले ताको वैष्णव न जाननों. यद्यपि बडो पंडित होय, और समझिवे वारो होय, परंतु वाको अपने संप्रदाय को ज्ञान न होय तो वाको संग वडो दुःखदाई हे, और थोरो समझे परंतु पुष्टि-मार्ग में तत्पर होय ताको संग हितकारी हे, वैष्णवकी निंदातें कोटि कोटि अपराधतें दुःखी होय. और वैष्णव होय के लौकिक वस्तु में तृष्णा न राखे, और कामनातें दुर्बुद्धि होय और तृष्णातें केवल स्वार्थ होय, भलो बुरो न सूझे, केवल स्वार्थ होय तब प्रसन्न होय, स्वार्थ न होय तो निंदा करे और तृष्णातें मनमें संकल्प विकल्प होत हें, तब अपनो स्वरुप, अपनो धर्म भूलि जात हें. तब मनमें अनेक प्रकार के लोभ-रुपी तरंग उठत हें सो लोभपें भलो बुरो कार्य सूझे

नाही. और यिवेक ज्ञान सब जात रहे तब झूंठी साँची बात बनायके अपने कार्य में तत्पर होत हे. द्रव्य तथा वस्तु लेत में डरपत नाहीं हे, और द्रव्य की रक्षा के अर्थ अनेक जतन करत हें, तातें वैष्णवको लोभ तृष्णा करनी उचित नाँहि हे, वैष्णव को अपराध होयगो तब श्रीठाकुरजी मति कहुं अप्रसन्न होय जाय ! और यह कालतो सगरे जगत को ग्रसत हे, सो मोहुको ले जायगो, तातें लौकिक वैदिक में आसक्त न होय, और करे बिना न चले तातें सहज में बने सो करे. परंतु मनतें आसक्त न रहे, यह मनमें जाने जो अपने धर्म विना सहाय करिवेवारो कोई नहीं हे. अपनो वैष्णव धर्म गयो तब सब गयो. सो वैष्णव धर्म दृढ होय तो प्रभु सहाय करे. और धर्म गयो और कछु लौकिक सिद्ध भयो तो वे लौकिक चारि दिन में जात रहे, और परलोक बिगडे, तातें भगवद्धर्म को माहात्म्य हृदेमें राखिके केवल प्रभुनको आश्रय करनो, और स्वार्थतें धर्मजाय, अथवा लौकिक विषयादिक सुख के अर्थ करे तो धर्म जाय. और

श्रीठाकुरजीतें गुरु विषे अधिक प्रीति राखनी, यह जाने जो कछु भयो है, सो इनकी कृपा ते भयो है, और आगेहु इनकी कृपाते होयगो. सो तो योगेश्वर के प्रसंग में कह्यो है. जो श्रीठाकुरजी में बड़ी प्रीति होय और गुरु विषे भाव तथा वैष्णव विषे दया नहीं होय तो वे सब राखमें होमत हैं, और वैष्णव को तथा गुरु को समाधान प्रभु साक्षात अपनो करके मानत हैं. और वैष्णव सों मिलके अपने जन्म जन्म के प्राणप्रिय श्रीठाकुरजी तिनको स्मरण करे. सो मनमें यह मनोरथ राखे जो श्रीठाकुरजी प्रसन्न कब होय, लौकिक कार्य अर्थ न राखे या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति वैष्णव के लिये शिक्षा दिये हैं।

इति श्रीगोकुलनाथजी कृत तेरहमो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत चौदहमो

अब श्रीगोकुलनाथजी चौदहमो लक्षण कहत हैं :--जो वैष्णव लौकिक वैदिक कार्य, देह

कार्य, अनित्य करि जाने. और पुष्टिमार्ग को धर्म सत्य जानि कार्यमें तत्पर रहे. और कोई धर्म तथा लौकिक कार्य तुच्छ जानि दुःखरूप जाने और तीर्थ को माहात्म्य सुनिके मनके सेवा स्मरणतें चलावनो नहीं, और तीर्थ को फल तुच्छ करि जाने. जो गंगा जी सरिखे तीर्थ जगतमें कोऊ नाहीं सो "रुक्मिणी मनमेंहु न लाई", और वेद, पुराण, शास्त्र, श्रीभागवत, गीता इनके वचन सत्य करि जाने. परन्तु अनेक प्रकार के अधिकारी हैं तिनके अर्थ जाननों, और पुष्टिमार्गके वचन तथा धर्म मनमें राखनो, और अनेक प्रकारके फल तुच्छ करि जाननों. और जयन्ती आदि एकादशी सत्य करि जाननों, परंतु फल की कामना मनमें न राखें और भगवद्सेवा स्मरण सर्वोपरि जाने. और लौकिक विषय के अर्थ स्त्रीको न जानें, और बिषयहु भगवदीय पुत्र होवेके अर्थ करे, और भगवद सेवा अर्थ स्त्रीमें प्रीति राखे. भगवदीयसों भगवद् वार्ता दैन्य पूर्वक करे, अपनी उत्कर्षता न जनावे, और अपन को ज्ञान न होय

तो शुद्ध भाव सों प्रश्न करे. और भगवद् भाव की वार्ता अपने मनमें दृढ़ विश्वास करि राखे. उन भगवदीय की लौकिक चेष्टा न देखें, तो भगवद् धर्म हृदय में दृढ़ करिके रहे. या प्रकारसों श्रीगोकुलनाथ जी आज्ञा किये हैं।

इति श्री गोकुलनाथजी कृत चौदहमो वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत पन्द्रहमो

अब औरहु श्री गोकुलनाथ जी पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त कहत हैं :—जो वैष्णव को लौकिकमें आतुरता न राखनी, लौकिक की आतुरता सों सेवा विषे उद्वेग होय, तब प्रभु प्रतिबन्ध करे, सो कहे हे "उद्वेगः प्रतिबन्धो वा भोगोवास्यात्तु बाधकः" ऐसे कहे हैं. सो सेवामें लौकिक जीव को समाधान न करे और सेवा में गुरुको कार्य तथा भगवदीयको कार्य करे. तो चिन्ता नाहीं. सो प्रभु अपनो कार्य जानि वेगही प्रसन्न होंय. और मुखरता दोष बहुतबड़ो है सो बिचार राखनों. लौकिक वार्ता कहे सुनेते भीतर ते आसुरावेश होय तासों सेवामें काहुसों संभाषण न

करनो. और लौकिक बातहु न करनी. और सेवा विषे बहुत बोलनों नाहीं. और काहु की झूठी सांची करनी नहीं, श्रीठाकुरजी की प्रीति सों प्रभुन को उपकार मानिकें टहल करनी. ऐसे जानिके करनी जो प्रभुन ने कृपा करिके टहल करवाई हे, और सेवा करिके कछु लौकिक वैदिकमें वासना न राखनी अपनो मुख्य वैष्णव धर्म जानि सेवा करें. और वैष्णव होयके कछु दुःखमें व्याप्त न होनों, और श्री ठाकुरजीके वस्त्र आभरण सामग्री स्वरुपात्मक जाने, तातें प्रभु संबंधी होय तो अपनो लौकिक न जाने, और प्रभुनको नये वस्त्र कराय, प्रसादीसो अपनो कार्य चलावे, और आप बिना परसादी पेहरे तो बहिर्मुखता होय. और चिंता कष्ट काहु बातकी अपने मनमें न लावे. और अपने भोगको निवृत्ति दुःख करके जाने. सुखमें प्रभुनको भूलिजात हैं तातें सुखतें दुःख भलो, 'जो प्रभुनको स्मरण तो हो, सोई कुंतीजीने कही है, जो विपत्ति भली जामें आपको दर्शन होय." और पुष्टीमार्गीय पंचाक्षर

मंत्रको जप करनों, और भगवद् नामके भूलेते आसुरावेश होय हे, और कालादिक खाय जात हे और श्री ठाकुरजीकी बाललीला, किशोरलीला, और व्रजसंबंधीलीला, इनके गान सुनेते श्रीठाकुरजी वेगही प्रसन्न होय. और भगवदीय वैष्णवके आगे लीलाको गान करनो, साधारण कोई बैठो होय तो शिक्षाकी बात कहनी, शिक्षाके कीर्तन गान करने. जो भक्तिमार्गको द्वेषी बहिर्मुख बैठयो होय तो अपने मनमें गुनगान भगवदस्मरण करनो, बाहिर अपने धर्मको प्रकाश करे नहीं, और भगवदीय को सेवा स्मरण तथा भगवदधर्म बढायवे को उपाय करनों, और काम, क्रोध. मद, मत्सरता, लौकिक आवेश सर्वथा दूरि करनों, अपने पास तथा और वैष्णव के पास लौकिक आवे तो भगवद धर्म में मन लगायवेको शिक्षा करनों, और न माने तो कछु बोलनो नहीं. और वासों बहुत प्रीति न करनों. और भगवदीय के मिलिवे को उपाय करनों, उनकी टहल करि, प्रसन्न करि. भगवदधर्म पूछनों सो विश्वास

करि पूछनों. चलनो और जो कछु भगवद् धर्म न बनि आवे तो ताप क्लेश करनों. और भगवदीय को तथा अपने गुरु को घर लायके प्रसन्न करनों. और भगवदीय सों लौकिक वार्ता न करनी जो यह काल परम दुर्लभ हें, सो यह जानिके पुष्टि मार्ग को प्रकार पूछनों और भगवदीय देशान्तर ते आये होय तो उनसो मिलनों, जो भगवदीय के हृदय में प्रभु बिराजत हें, सो तिनके मिलते हृदय पवित्र होय, तब अपने हृदय में प्रभु कृपा करिके सर्वथा पधारेंगे, यह भाव जाननों. या प्रकार श्री गोकुलनाथजी वैष्णव को शिक्षा किये हैं।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत पन्द्रहमो वचनामृत संपूर्णम्

* वचनामृत सोलहमो *

अब ओरहु श्रीगोकुलनाथ जी आज्ञा करत हें: —जो वैष्णव देश परदेश कूं जाय: और श्रीठाकुरजी बिराजत होय, तो तहां चालिके जाय, और श्री वल्लभ कुल बिराजत होय तो महा नम्र होय जायके दर्शन करे, ता पाछे खान पान करे,

ओर जहां अन्यमार्गीय पूजा होत हे तहां सर्वथा न जानों, ओर जहां श्री पुष्टि पुरुषोत्तम बिराजत होय. ओर श्रीवल्लभकुल विराजत होय तहां खाली हाथ न जानो, ओर नित्य न बनि आवे तो, जब जाय तब, अथवा बिदाय होय तब. यथाशक्ति फलफूल पहुंचावनों, ओर भेट करनी, और श्रीनाथजी के दर्शन में आलस्य न करनों ओर प्रभुन के दर्शन में आलस्य करे तो अज्ञान बढे. प्रभुनकी सेवा करत होय, ओर दर्शन होय चुके, तो अपराध नहीं, दर्शन ते ज्ञान होय, ओर ज्ञान हृदय में भये ते भगवद् स्वरूप हृदेमें आरूढ़ होय. ओर अज्ञानतें विषयादिक आसक्ति होय ओर जप करे सो काहुसों जतावे नहीं, जप भाव हें सो अत्यन्त गोपनीय हे, ओर शास्त्र में कहें हें कि जो जप ऐसे करनो जो होठ रंचकहु खुले नहीं, या भांति भीतर अनुभव करतहीं जप करनो. ओर गौमुखीकी माला बाहरकाढनों नहीं, ओर माला भीतर उरझि जाय तो उपरिके मनिका निकासिकें सुर-

झाय के ऐसे धरे, जो फिर न उरझे. और मनिका १०८ राखे. तिनसों जप करे, और सुमेर को उलंघन न करे, सुमेरको उलंघन करे तो लीलाते बाहिर परे जपको फल तिरोधान होय. और गोमुखी उपरणा में ढांकिके जप करनो, और गोमुखी हे सो अलौकिक हें, और जप में बोलनों नाहीं, देह मनको चंचल न करनो. नेत्र मुंदे रहे. सो लौकिक में दृष्टि न जाय. जपकी सेवा की साधारण लौकिक क्रिया न जाने. जो लौकिक जाने तो बासो प्रभु जप न करावे. और प्रतिबन्ध होय, तातें सेवा जप को माहात्म्य भूलें नाहीं, माहात्म्य भूले और याको साधारन जानें. तब आलस्य होय, आलस्य तें अज्ञान होय, अज्ञान तें दुर्बुद्धि संसारासक्ति होय संसारासक्ति ते श्रीठाकुरजी ते बहिर्मुखता होय, यह कहे जो सेवा दर्शन और जप पाठते कहा होयगो, और लौकिक विना निर्वाह कैसें होयगो, और वैष्णव मिले तो पाखण्ड करिके कहे जो, सेवा दर्शनमें कहा है! और मन लगेगो तब कार्य होयगो सोवे

वे तो योंहि पचिमरत हैं, सो या प्रकार सिद्धांत करि लौकिकमें तत्पर होय, और मन हे सो भगवद सेवा कीर्तन वार्ता करवे में लगेगो, परन्तु जीव की उलटी गति है, ताते भगवद धर्म में मन लगत नाहीं, सो याही प्रकार दुष्ट सिद्धान्त ते श्री ठाकुर जी अप्रसन्न होत हैं और भगवद धर्म को एसो साधारन न जाने. अलौकिक जाने, और यह कहे जो. मेरी लौकिक देह तासों श्री प्रभु कृपा करिके अलोकिक सेवा करावे हें और लौकिक जिव्हाते भगवद नाम निकसत हें. सो बड़ी श्रीमहाप्रभुजी की कृपा ते प्राप्त भयो हें, लौकिक तो सघरी योनि में सिद्ध होत आयो हें, और प्रभू के स्वरूपको दर्शन सेवा स्मरण जप पाठ तो परम दुर्लभ हे, सो यह म-हात्म्य जाने तब प्रीति होय. या प्रकार श्री गोकुल-नाथजी कल्याणभट्ट प्रति वैष्णवको शिक्षादिये हें।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत सोलहमों वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत सत्रहमो

अब श्री गोकुलनाथजी सप्तदशमो वचना-मृत कहत हें :—सो वैष्णव होय सो या प्रकार पुष्टि

मार्ग को सर्वोपरि जानें. तब पुष्टि मार्ग में रुचि होय. सर्वोपर मार्ग कब दीसे ? जब पुष्टिमार्गीय अनन्य भगवदीय को संग होय, दैन्यभावसों भगवदीय के कहेको विश्वास होय. तब फल सिद्ध होय और भगवदीय को लौकिक न जाने. जो भगवदीय के हृदय में प्रभू बिराजे हैं, और भगवदीय की देह इन्द्रिय. मन अलौकिक है, सो उनके संग ते यह अलौकिक होय. सो अलौकिक कैसे जानिये ? जो दुःखमें विवेक, धैर्य. आश्रय दृढ़ होय, और काहुतें कपट. छल. निन्दा काहु को बुरो न चीते, और चोरी तथा विषय लौकिक न करे. जो कोई संजोग पायके होय जाय तो बहुत खेद पावे, ऐसे भगवदीय को संग सदा करनीं, जैसे श्रीठाकुरजी के दर्शन ते पवित्र होय, एसे भगवदीय के दर्शन ते पवित्र होय, भगवदीय को संग होतही मनमें आनन्द तथा भगवद धर्म की स्फूर्ति होय, और भगवदीय की सेवाते

श्रीठाकुरजी बहुत प्रसन्न होय, और भगवदीय के संगतें असमर्पित अन्याश्रय छूटे. असमर्पित लिये तें आसुरवेश होत हैं, अन्याश्रय तें वैष्णव धर्म पतिव्रत जात हैं, जैसे व्यभिचारिणी होय है, ताकों भ्रष्ट जाननो, पुष्टिमार्ग में अंगीकार न होय, अनेक मायाके दुःख पावे और वैष्णव को अपने अर्थ उद्यम न करनों, और मनमें यह विचारनों जो व्यो-हार किये तें प्राप्ति होय, तो वैष्णव सेवा, गुरु सेवामें कछु अंगीकार होय. सो यह भाव राखें. तों लौकिक व्योहार बाधक नाहीं. होय अपनेकुटुम्बको भरणपोषण चल्यो जाय, और भगवद्धर्म बढ़े. और व्यवहारहु अलौकिक करे, अनिषिद्ध सत्यको करे, और वामे हू सघरो दिन पच्यो न रहे. राजभोग पाछे उत्थापनके भीतर इतनेपें करे. सो इतनेहीमें आवनहार होयगो सो प्राप्त होयगो. सो सेवा दर्शन नियमसों करे, और बहु द्रव्य कमावे तो अपने घर श्रीठाकरजी तथा गुरुनको पधरावे. और वस्त्र आभूषण भेट करे, और अलौकिक मनोरथमें चित राखें. और नाना प्रकार

की सामग्री करिकें श्रीठाकुरजीको आरोगावें, तापाछे वेंष्णवकों महाप्रसाद लिवावें. और द्रव्यको संकोच होय तबहु श्रीठाकुरजीके पात्र तथा अभरन वस्त्र इनमें अपनी सत्ता न जाने, या प्रकार अपराधतें डरपत रहें और धीरज राखे. यों न जाने जो राजा कुटुम्बको भय राखिकें अपने गुरुके घर पधराइये तो सुख होय तो वैभव बढावनो नहीं. और नाना प्रकार की सामग्री भोग धरि पाछें वेंष्णवकों महाप्रसाद लिवावे, तामें द्रव्यकी सफलता होय, तातें कोई बात को दुःख न पावे, छिन छिनमें प्रभुनको नाम स्मरण करनो. और मनमें दयाभाव राखनों. अहंकारादिक मनमें न राखनों, या प्रकार श्रीगोकुनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हें।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत सप्तदसमो वचनामृत संपूर्णम्

* वचनामृत अठारहमो *

अब श्रीगोकुलनाथजी अठारहमों वचनामृत कहत हें—जो जहां अपने मार्गकी निंदा तथा श्री वल्लभकुलकी निंदा अपने पुष्टिमार्गकी निंदा, वैष्णव

की तथा धर्मकी निंदा होय ऐसे दुष्ट जीवके पास कबहु न बैठिये. और अवश्य कारण पायकें मिलाप होय तो अपने पुष्टिमार्गकी चर्चा वार्त्ता करनी नहीं. और कोउ चलावे तो वाहि गोप्य करि राखें, सो तहाँ प्रकाश न करें, तो अयराध पड़े, सों काननमें निंदा सुने तें यह शास्त्रमें कहे हें जो अपने प्रभुकी निंदा सुने अथवा करे तो ताकी जीभ काटि लीजे. और अपनों वश न होयतो तहांते भाजि जानों, परंतु कान सों सुने नहीं, जैसे हरिदासने जेमल को शिक्षा दीनी. सो जहांतांई ऐसे बहिमु खसो भिलाप न करनो. जो बहिमु ख होय सो एतन्मार्गकी निंदा करे. और आछो ब्राह्मण पंडित हे, वा अच्छो क्षत्री होय, परंतु एतन्मार्गको विरोधी होय, तो वह बहि-मु ख हें. और वो योंहीं जात हे, और एतन्मार्ग में अत्यंत श्रद्धा हे, ताकों दैवी जीव जाननो. सो दूसरे जन्ममें शरण आवेगो. जो जोव पुष्टिमार्ग में तो आयो, परन्तु याको पुष्टिमार्गको फल नाही होय, और शरण प्रताप तें मुक्तिमार्ग को तो पावेगो,

और संसारी हे और एतन्मार्गमें प्रीतिहे. साधारन हें सो तिनसों लौकिक वैदिक कार्यार्थ मिलनों. और एतन्मार्ग के द्वेषी को सर्वथा त्याग करनों या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हे.

इति श्री गोकुलनाथजो कृत अष्टादशमो वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत उन्नीसमो

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति उन्नीसमों लक्षण कहत हें—जो वैष्णव होय के भगवादीय पास आवे तो वाके संशय दुरि करि पुष्टमार्गीय भगवद् धर्म बढावे, सुगम उपाय वतावे. तातें वैष्णवको मन बढ़े सो नवरत्न में कहत हें "अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनम्" सो अज्ञान करिके शरण ही आवे सो शरण आये तें जीवको सर्व कार्य सिद्ध होय हे. और कहे हें जो. "निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर्जनैः" सो शरण आये पाछें वैष्णव को संग करे तब ज्ञान होय. ता पाछें त्राप क्लेश समझे, और प्रथम कठिन उपाय कहेतो शरण आयवे में जीबको वड़ो संदेह पड़े. तातें क्रम क्रमसों

सेवा स्मरण तथा लीलाकी भावना ताप स्नेह बढ़ावे और अनन्य भगवदीयको अपनों हितकारी जाने, और पुष्टिमार्गसों विपरीत धर्म बतावें ताको अपनो शत्रु जानने, तातें प्रेमदिसा बारे कों संग करनो. और सतसंग बिना या कालमें दुःसंग बहुत मिलत हे, सो या करिके भगवदधर्म को नाश होय हे, सो या काल विषे अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध आयके पड़त हें, तासों सत्संग होय तो भगवद धर्म बढ़े. नहीं तो अन्याश्रय होय जाय. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा किये हें।

इति श्रीगोकुलनाथजी कृत उन्नीसमो वचनामृत संपूर्णम्.

वचनामृत बीसमों

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा करत हें:--जो भगवदीय कों मन लगायके भगवद सेवा करनी, और फिर राजभोग पाछें एकान्त में दोय चार घड़ी. जैसो सौकर्य होय तितनें मानसी सेवा करनी. और नखते शिख पर्यन्त सबरे शृङ्गार को

ध्यान करनों. सो न्हायके मन्दिर में जायकें मानसी रीतिसो ॠतु सामिग्री करि आरोगावनो, सो राज भोग पर्यन्त सब भावना करें, ता पाछें महाप्रसाद लेय, और वैष्णव आयो होय तो प्रथम उनको महा प्रसाद लिवावे, ता पाछें मानसी करि आप महाप्रसाद लेय. या भावसों उत्थापन से सैन पर्यन्त भावना करनी और पाछे कुंजकी भावना करनी, सो अत्यन्त दु-लभ हे, और अपनों मन लौकिक आशक्तिमें होय तो न करनो, और यह कहे जो श्रीमहाप्रभुजी आ-पनों दास जानिके कृपा करेंगे, या प्रकारकी भावना करनी, तातें भावना में प्रथम प्रभुन के शृंगार में मन लगावे. और जन्म जन्म की अविद्या करिकें भगवद स्वरूप में मन लागत नाहीं, सो शृंगार में तो अद-भुत छवि देखिकें मनको शृंगार करे, तब कार्य होय तब कल्याणभट्ट प्रश्न कियो, जो महाराज शृंगार को कछु वर्णन करिये, सो अब श्री गोकुलनाथजी शृंगार को वर्णन करत हें, जो प्रथम तो श्री ठाकुर जी के चरणाविन्द में मन लगावे, सो परम कोमल

सुकुमार, तिनमें सोरह चिन्ह हे, और प्रथम बड़के पत्र आरक्त होय तैसे वामचरण पुष्टि, दक्षिण मर्यादा तिनमें दश नखन की कांति चन्द्रमावत ताप हारि तिनमें नुपुर आदि नख भूषन जडाऊ, ताके उपर जे हरि पायल, झांझर, कडा, सांकलाँ आदि, ताके ऊपर गुल्फ सुन्दर, तापे घूंघरू, तापर जंघा कदली स्थंभवत् और कटि केसरिवत् पतरी, तापर किंकिणी तथा पीताम्बर, धोती, सूथन और त्रिवली और हृदय विशाल ता उपर चौकी, पदक. धुकधुकी, चम्पाकली बंधी हे, और वैजयन्ती माला, मोतिन की माला, कदम्ब के कुसुमन की माला, तापर कठसरी, सांकलां, पगलां, भुजमें बाजुबन्ध जडाउ फोंदना, श्यामबलय, पोहांची, कंकण. हस्तफूल, नखावली १०, और श्रीहस्त, तामें लाल मुरली. तापर नग जड़ाउ, ताके पास चिबुक, हीरा के आभूषण और अधर नीचे मन्दहास्य दंतकांति. कोटि बिजली वत. या भांति आगें आरक्त मुख, और नासिका में वेसरको मोती, दोउ नेत्र में लावण्य कटाक्ष. पांच

प्रकार की चितवनि. मनहरण. दोउ भृकुटी काम धनुषवत्, सुन्दर भालपर कुंकुम. तथा केसर कस्तूरी को तिलक. भोंह पर कुण्डल मकराकृत. मयूराकृत. कर्णफूल. उपर कर्णिकालसत. मस्तक ऊपर मुकुट. कुलह. टिपासे. ग्वालपगा. भांति भांति के रंगन के जडाउ, मणिमाला गुंजा, और चरणारविंद में तुलसी गंध, दोउ ओर दामिनीवत् और भक्त अनेक प्रकार की लीला करें या प्रकार मन कों स्वरुपासक्ति को वारंवार विचार करें, तब सहज में ध्यान हृदे में ते न टरे, तब लीला की भावना होय, और नाना प्रकार की सामिग्री तथा कुंज के उत्सवादिक की सामिग्री करें, भावना करें, या प्रकार मानसी करि दंडौत करे. तब प्रभु कृपा करिके हृदय में पधारें, तब लौकिक में ते देह छूटि अलौकिक में लगें. तब रोमांचित होयकें रुदन करें. या प्रकार प्रेम की दशा होय, ताके भाग्य को पार नाहीं. सो या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्टसों आज्ञा किये हें. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत वीसमो वचनामृत संपूर्णम्.

❋ वचनामृत इक्कीसमो ❋

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति इक्कीसमों वचनामृत कहत हैं:—जो वैष्णव संयोग को स्मरण करि आनंद पावे कबहु विरह करि दीन भावको प्राप्त होय, यह दैन्यता फलरुप हें, दैंन्यातें, संतोष होय, तातें श्रीठाकुरजी अति प्रसन्न होय और जब निःसाधन होय तव यह विचारिये:—

चित्तेन दुष्टो वचसापि दुष्ट; कायेन दुष्टः क्रियापि दुष्टः ।
ज्ञानेन दुष्टो भजन दुष्टो ममापराधः कतिधा विचार्यः ।।

या प्रकार अपने को समाधान करि, हीन जानि मनमें प्रभु को दास भाव राखे. और अपने स्वरुप को बारंवार बिचारनों जो में कौन गिनती में हुं, और मेरी देह मलमूत्रसों भरी हें. और जितनी वस्तु सब खोटी कही हें तितनी मेरी देह में हें, सो औरतो में कहा देखूं सो हाड, मांस, चर्म थूंक-की भरी हें, अनेक द्वार करिकें मल वहत हें, एसो

जो में महादुष्ट अज्ञानीं हुं और काम क्रोध, मद, मत्सरतासों भयों हुं, और मोहरुपी बेडीसों बंध्यो हुं, अनेक दुःख संसार में भोगत हूं, सो एसो जो में, तो मोकुं संसार में कहुं ठिकानो नहि हे, और श्री आचार्यजी परम दयाल हें, सो मोसे पतितकों शरण लीयो हें, सो में पुष्टिमार्ग में शरण आयों. नातर मोकों तो नरकमें हुं ठिकानो नहीं हतो, तातें श्रीआचार्यजी ने परम कृपा करिके शरण लेकें अपनो पूर्ण पुरुषोत्तमको संबंध करायो हे. सो अब मोको यह कर्तव्य हे, जो दृढता करिकें श्री पुरुषोत्तम के चरणारविंद में मन लगायकें रहनो. और कोटानिकोटि जुग भ्रमत महा दुखित भयो हूँ, ताते संसार में तें मन काढिके प्रभुन के चरणारविंद में मन लगाऊं, या प्रकार अपनें छिन छिन में संभ्रमे तब दीनता उत्पन्न होय, और सब वस्तु में भगवदइच्छा जाने. और उद्यम होय सो करे. और जामें धर्म जाय सो न करनों. और धर्म गयो सो सब गयो, और सगरो स्वार्थ गयो. और अप-

नी खरी मजूरी होय, ताको श्रीठाकुरजी अंगीकार करत हें, यह अपने मनमें निश्चय करे, जो कोइ श्रीठाकुरजी को नाम लेकें वस्तु लावे, और श्रीठाकुरजी को समर्पें नही और तामें ते खानपान करे तो पातकी होय और श्रीठाकुरजी की वस्तु अपनेंखान-पान में लावे, और भगवदधर्म वेचिके लावे तो सगरो भगवदधर्म नष्ट होइ जाय. एसें ही कीर्तन करि के देह निर्वाह चलावे, और भगवद धर्मको प्रगट करि अपनो निर्वाह चलावे, और गृहको पोषन करे, तो ताको कछु भगवद्धर्म फल न होय. और संसार में संसारी की रीति होय तैसें चले. और काहुको बुरो हु न करे. और लोग जाने जो केवल संसारी हें, जहां एतन्मार्गीय वैष्णव मिले तब भगवद् धर्म की चर्चा वार्ता करे. और वैष्णव के आगे अपनी बडाई तथा अपनो पुरुषर्थ न करे, जो मेंही कमात हुं तातें मेरो गृहस्थाश्रम चलत हे. एसे विचारे जो प्रभु बड़े हें सो सबको पालन पोषन करत हें, ज्ञानमार्ग में साधन में कष्ट त्याग दृढ होय, तब उद्धार होय

और पुष्टिमार्ग में या प्रकार चले तो गृहस्थी कों उद्धार होय हे. सो संसारी के उद्धारार्थ यह मार्ग हे, तामें त्यागि विवेकी होय तो कहा कहेनो, यह ज्ञान तादृशी भगवदीयतें होय. याको दुसरो प्रकार नाहीं हें. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी वैष्णव को आज्ञा कियेहें.

इति श्री गोकुलनाथजी कृत एक्कीसमो वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत बाईसमो

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति आज्ञा करत हें:—जो वैष्णवको मिथ्या भाषण सर्वथा नहीं करनों, क्योंकि झूंठ बराबर पाप नहीं हें. जो राजा युधिष्टिरनें इतनो कह्यो "जो नरो वा कुंजरो वा अश्वस्थामा मर्यो" सो इतने ही पापतें नर्क को दर्शन करनों पर्यो. सो मनमें बहुत दुःख पायो. सो तामें पडे ताके दुःख को तो पार नाहीं. तातें मिथ्या भाषण सर्वथा न करनो तातें मिथ्या भाषण को महापाप हें. और श्रीठाकुरजी की रसोई जाके ताके हाथसों न करावनी. अपने हाथसों

पवित्रतासों करनी. और रसोई को कार्य दुःखरुप न जाननों. जो मोको श्रम होयगो, कैसे करूं, धुं- आ नहीं सह्यो जात हे. और या पुष्टिमार्ग में तो श्रीठाकुरजी की रसोई की टहल परम उत्तम हे, जहां तांई अपनो शरीर चले तहां तांई ओरके हाथ रसोई न करावे. सेवा शृग्ड़ार तो करावे. परंतु रसोई तो अपने हाथसों ही करे. और रसोईकी अपरस न्यारी राखें. ताको उत्तम भगवदीय कहिये. और शरीर न चले तो, अवश्य आय पडे तो ओर के हाथ करावें. परंतु मन में ताप राखे और रसोई करिकें आपही खायके न बैठि रहे, यासूँ दोष ला- गे. तामें प्रथम वैष्णव को लिवावे. ता पाछे आप लेय. और वैष्णव को मुख्य करि दास भाव राखे, और दास तो ताको कहिये जो वैष्णव की झूँठिन खाय, और मार्ग की तो यह मर्यादा हे. जो श्रीठा- कुरजी की तथा श्रीवल्लभकुल की झूंठिन खाय. इन बिना ओर की खाय तो भ्रष्ट होय जाय. या धर्मसो उपर वैष्णव की झूँठिन लेवेकी कही ताको

निराकरण करत हें. जो मुख्य तो व्रजभक्तन को स्वरूप गाय हें, सो गायकों प्रथम महाप्रसाद खवावें और वैष्णव को खवावें, तापाछें यह सबरो महाप्रसाद वैष्णव को झूठिन भयो. और वैष्णव की सामर्थ्य न होय तो और अपनों कार्य जैसे तैसे च-लावत होय तो गायको भाग तो अवश्य देइ और यह रसोई करे हे, तब गाय, पृथ्वी, मनुष्य, देवता, पितृ ये सब आशा करें हें. सो जब गाय को ग्रास काढे तब ये सघरे तृप्त होय जाय. तातें गाय को भाग अवश्य काढनों. जो यह वैष्णव और मनुष्य मात्रकों धर्म हे. और श्रीठाकुरजी की समिग्री में अपनो मन चलावनो नहीं, और कदचित् चलावे तो महापापी होय. और श्रीठाकुरजी आरोगे नहीं और सिद्ध सामिग्री काहुको दिखावनी नहीं. और श्रीठा-कुरजी कें लिये फल फूल सामिग्री करी होय तो तामें तें, स्त्री, पुत्रादिक कों काहुको दिखावनो नहीं जो लौकिक प्रीतितें काहुको देय, और लेयतों ब-हिर्मुख होय जाय. और याकों धर्म जाय. श्रीठा-

कुरजी अंगीकार न करें. तातें भगवदसेवा हे सो गोप्य हे. सो काहुकों जतावे नहीं. जोसेवा प्रगट करि अपनी प्रतिठा बढावे ताको पाखंडी कहिये. सो ताकी सेवा में कछु पुष्टिमार्ग को फल नाहीं. और पाखंड करिवेवारे के हृदय में लौकिक आवेश, आवें सो लौकिक आवेशतें बहिर्मुख होय, और सेवामें प्रतिबंध परे. सो पाखंड को को मूल लोभ हे, सो जब लोभ छूटे तब पाखंड न होय. और लोभ के लिये जगतमे पाखंड करत हे सो वह पाखंडी होय. ताको अन्याश्रय होय जाय, ताकरिके लोभ के वश ते ज्ञान विवेक को फल जात रहे, सो एसे लोभी पाखंडी के हृदय में श्रीठाकुरजी कबहुं न बिराजे, तातें सेवा थोरे ही करे, यथा शक्ति करे, ताको कछु बाधक नाहीं, सो थोरे ही भगवद्धर्मसों वाके सगरे कार्य सिद्धि होय जाय और बहुत करे और पाखंड सहित होय तो भगवद्धर्म न बढे. तातें अलौकिक रीतसों सेवा करे. सो श्रीठाकुरजी के जानिवेसूं कार्य होयगो जोलोगन के जाने ते कछु सिद्ध होय नहीं. और वैष्ण-

वको यह धर्म हे, तो उत्तम समिग्री होय सो श्रीठ-
कुरजी को समर्पे, और अपने पास द्रव्य न होय तो
मनमें ताप करिके कहेजो यह तो प्रभुन के लायक
हे. और जहां तहां तांई बने तहां तांई उत्तम सामिग्री
तथा नूतन वस्त्र और फलफूल थोरोहु बने तो
अवश्य लावनों, सो मेहेंगे सेंगे को विचार नाहीं कर-
नों. श्रीठाकुरजीकुं तो स्नेह अत्यंत प्रीय हे, सो
श्रीठाकुरजी को उत्तम वस्तु जहां तांइ बने तहां तांइ
अंगीकार करावनों. और श्रीठाकुरजी को सुगंधा-
दिक अत्यंत प्रिय हे, सो यथाशक्ति समर्पे. और
सुगंध नित्य न बने तो उत्सव में समर्पे. द्रव्य के
अभावसों श्रुतिदेवने मृतिका में पानी डारके सुगंध के
भावसों प्रभु को समर्प्यो हुतो. सो एसें भावतें सघरी
बात सिद्ध होय. और श्रीठाकुरजी को तुलसी अत्यं
त प्रीय है. सो श्रीठाकुरजी के चरणारविंद में नित्य
नेमसों विधिपूर्वक समर्पनी. और तुलसी समर्पती
बिरियां गद्यको पाठ करनों, सो श्रीठाकुरजी के चर-
णारविंद को संबंध श्री आचार्यजी महाप्रभुजी द्वारा

भयो हे, तातें श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी को सर्वोपर जानें. और तुलसी हे सो बृन्दाको स्वरूप हे. पतिवृता है और मध्य तुलसी के बोज जो हे, ताते दृढ संबंध भयो जाननो तातें तुलसी चरणन में समर्पनो. तब जा दिन जा समय श्री बृहमसंबंध भयो ता समय अपने गुरुके सनमुख जो श्रीठाकुरजी हे तिन को स्वरूप अपने श्रीठाकुरजी में जानि समर्पै. काहेतें जो यह चरणारविंद को दृढ संबंध भयो हे. सो चरणस्पर्श करे तें प्रीति बढे. और प्रभु के चरणारविंदमें भक्ति हे, सो भक्ति की वृद्धि होय. और या प्रकार विचारे जो कहां भक्तिरूपी चरणारविंद अलौकिक, और मेरो हस्त लौकिक, परंतु श्री आचार्यजी महाप्रभुजी की कृपातें यह पदार्थ प्राप्त भयो है. और प्रभु मोकों चरणस्पर्श करायो है. तहां पूतनामोक्ष में श्रीआचार्यजी लिखे हैं. जो पूतना ने सोलह हजार बालकन के प्राण लीए, सो पूतना कों प्रभुने दुष्ट भावतें मोक्ष कीयो. और बालकहु भक्तभावसों श्रीठाकुरजी के हृदय में रहे. सो श्रीठाकुरजी ने यह

चारी जो सोलह हजार भक्त हें सो तिनकुं पूतना
राक्षसी के संगतें आसुरावेश भयो है, सो यद्यपि ज-
गदीश श्रीठाकुरजी के हृदय में हे, तोहु मिट्यो नहीं
यातें भक्तिरुप चरणारविंद को संबंध होय, तब आसु-
रावेश मिटे. सो यह विचारिकें ब्रम्हांडघाट की मृति
का खाइ, बाल चरित्र दिखाये, सो उन भक्तके अर्थ
आप मुख में माटी खाये तब ये उपर को चरित्र
दिखाय व्रज के बालक तथा वेदरूप श्रीबलदेवजी
इननें श्रीयशोदाजीतें कह्यो जो श्रीठाकुरजी नें मृ-
तिका खाई हे. इतनी सुनिके श्रीयशोदाजी श्रीठा-
कुरजी के पास आई और डरपाय के कही जो श्रीठा
कुरजी सांची कहो जो तुमने माटी क्यों खाई हे!
तब श्रीठाकुरजी ने कह्यो जो "मैया मैंने माटी नहीं
खाई हे." सो यह लीला करि अपनी पुरुषोत्तमता
बताई, सो श्री बलदेवजी ईश्वर हें, तोहु जाने नांहि
जो जितनो प्रकार श्रीठाकुरजी जतावें तितनो जानें.
तब श्रीयशोदाजी को मुख खोलि ब्रम्हांड दिखायें,
सो यह मृतिकाको प्रसंग अत्यंत गोप्य हे, सो या

प्रकार चरणामृत देकें सोलह हजार बालक पूतना के-
शुद्ध किये, ता पाछें वृतचर्या प्रसंग में चीरहरण लीला
कीनी सो चीर देकें चीरद्वारा इनके पुनःभाव को स्था-
पान कीये, तब रास की अखंड रात्रि देखिवे की यो-
ग्यता भई, सो अलौकिक रात्रि दिखाये, और वरदा-
न दिये जो शरद में रासलीला में दान होयगो, का-
हेतें जो चरणारबिंद के संबंधतें भक्ति सिद्ध भई हे,
तातें चरणामृत लेनों, और तुलसी चरणारविंदपें
समर्पनी, और चर्णस्पर्श करनो, या प्रकार नियम
राखे, तब भक्ति बढे, तब पुष्टिमार्ग के फलकी प्रा-
प्ति होय, और तुलसी हे सो जितनो भगवदधर्म में
प्रतिबंध हे, तितनों सब दूर करि अलौकिक देह की
दाता है, और तुलसी को अलौकिक स्वरूप हें, कहें
हें जो पुष्टिमार्ग मुख्य श्रीस्वामिनी जी विना रंचक
फलकी प्राप्ति नहीं हे, सो तुलसी श्रीस्वामिनीजी के
श्रीअगड़गां को गंधहे. तातें श्रीठाकुरजी को अत्यंत
प्रिय हे सोः

प्रियांगगंधसुरभि तुलसी चरणाप्रिये
समर्प याम्यहं देहि हरे देंह प्रलौ किकम् ॥१॥

सो या भांतिसों तुलसी बडो पदार्थ हें, और

तिव्रता पार्वती, जानकी इत्यादिकन की आधिदैव-क पतिव्रता हैं. सो गोविंदस्वामि गाये हैं—

श्री अंग प्रभति जेती जगजुवती। बार फेरिडारो तेरे रूप पर ॥१॥

या प्रकार अलौकिकि भाव जानि तुलसी समर्पे. और वृन्दा रुप तो मर्यादामार्ग की रीति सों सब जगत में दिखाये हैं. और जा दिन श्रीठा-कुरजी की सेवा चरणस्पर्श न बने, ता दिन को जाननों जो आज दिन मिथ्या गयो, सो यह भाव अत्यंत दुर्लभ हे, और दासभाव राखिके प्रभु की टहल करनी तातें प्रभु प्रसन्न होंय, और स्नेह तो अत्यंत दुर्लभ हे, और स्नेह विना सवरी क्रिया वृथा जाननी. एसो स्नेह बडो पदार्थ हे, सो या प्रकार सों भगवद् सेवा को नियम, अपने पुष्टिमार्ग कों धर्म भगवदीयसों मिलिकें पालनों. और भगवद् धर्मतें श्रीठाकुरजी में स्नेह होय, और दुःसंगमें अपनों धर्म जायवे में भय होय, और सत्संगते सदा भक्ति होय, और धर्म गयो तब सब पाप रुपक भयो, तातें

भगवदीयतें प्रीति सहित मिलाप राखें. तातें. याको कल्याण होय. या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्ट. प्रति वैष्णवनकों शिक्षा दिये हैं।

इति श्री गोकुलनाथजी कृत बाइसमों वचनामृत संपूर्णम्

वचनामृत तेइसमों

अब औरहु श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहत हैंः– जो वैष्णव को सखडी, अनसखडी को विचार राखनों और न समझत होय तो पुष्टिमार्गीय भगवदीयसों रीति भांति पूछनी, और वैष्णव को सामिग्री में और महाप्रसाद में विचार राखनों. जो सामिग्री में श्रीठाकुरजी की सत्ता जाननी, महाप्रसाद में वैष्णव की सत्ता जाननी, अपनी सत्ता न जाननी. सामिग्री की सेवा पवित्र होय, खासा जलसों हाथ धोय विवेक बिचार सहित स्पर्श करे, अच्छो भावनीक वैष्णव होय ताके हाथ सिद्धि सामिग्री देवावनी, तथा टहल करवावनों. और जहां तांई बने तहां तांई सिद्ध सामिग्री को कार्य आपुही करनों

और जो शाकादिककी सामिग्री बजारतें मंगावें सो नामधारी बिना काहुपें न मंगावे. और जो बने सो छोटी मोटीसेवा आपु ही करे. और कुटुंबमेंतें जाकी अत्यंत प्रीति होय ताके पास करावे. और आप पवित्रता में रहेः और पवित्रहीं कार्य करे, और र-सोई शुद्ध पोत के राखें. और राजभोग पाछें पात्रा-दिक मांजि के धरे. और सखडी में बडी पवित्रता राखें, सो एक एकसें छुइ न जाय. और अपवित्र-ता में बुद्धि की हीनता होय, तातें मलिनतासों न रहनों, और बहुत मैले वस्त्र न राखनों, सो काहेते जो वैष्णव के पास वैष्णव बैठे तब भगवदचर्चा वार्ता करे, तहां सर्वथा प्रभु पधारें हें, सों तिनको उन वस्त्रन में सों वास आवे सो यह भाव जानिकें वस्त्र उज्वल राखें. और भगवद् मंदिर में आपुकों जानों परे, तब ग्लानि आवे. तातें फटे मोटे की कछु चिंता नहीं. अपने देहके अर्थ जैसो बने तैसो पहिरे. परंतु बहुत मेलो न राखे और अपनें देहके अर्थ काहुके दिखायवे के अर्थ आछो कपडा नाहि पहिरे. यह

दास को धर्म हे. और सुकर, शयाल, गर्दभ, कुत्ता, धोबी, नीच जाति, चांडाल, भंगी, चमार, आसुरी, सूतकी, रजस्वला, छापकी, (गरोली) सर्प, इत्यादिकनकों छुवे तो तत्काल न्हाय डारे, और छीवे के स्पर्शतें दिन को छुयो दिन में ही न्हाय, रात्रिकों छुयो रात्रि में न्हाय, यह वेद स्मृति शास्त्र में कह्यो हे. और महाप्रसाद उत्तम ठोर को लेय. या प्रकार आचार विचार सुं रहे. और या प्रकार पुष्टिमार्ग की रीति में न समझे तो भगवदीय वैष्णवतें पुछ्यों चाहिये. और उत्सवादिक को लोप न करनों. क्यों कि, जब उत्सव आवत हें, तब श्री ठाकुरजी कों परम आनंद होत हे. जो फलानों उत्सव आवत हे. और श्रीठाकुरजीकों उत्सव न करावे, तों श्री ठाकुरजी अप्रसन्न होय जाय, तातें उत्सव यथाशक्ति सर्वथा करनों. सो विधिपूर्वक करनों. और मनमें दुःख पायकें न करनों और काहुके आगे अपनी बडाई न करनी. जो मैंने उत्सव कियो, और लौकिक वैदिक कार्य आय पडे तोहु उत्सव टारनो नहीं, अपने और

कार्य आय पडे तो वैष्णव के घर तथा अपने घर वैष्णव पास करावे. सो लौकिक कार्य अर्थ अलौकिक श्रीठाकुरजी को उत्सव टारे तो श्रीठाकुरजी जीव के उपर अप्रसन्न होंय. तातें अलौकिक कार्य में मन राखे. और लौकिक वैदिक आवश्यक होय सो करे, और पुत्रादिक को व्याह करे, तब मर्यादी होय तहां तिनके घर पुष्टिमार्ग की रीति सों महाप्रसाद लेय और अन्यमार्ग की रीति होय तो महाप्रसाद न लेनों. और लौकिक कार्य करनों होय, तो श्रीठाकुरजी को वस्त्र, सामिग्री पहिले करनी. और लौकिक को कार्य पाछें करनों, और नात जिमामनी होय तो प्रथम श्रीठाकुरजी की सामिग्री करे, पाछें श्री ठाकुरजी को भोग धरें, ता पाछें वैष्णव को लिवावें. और वैष्णव को लिवाये पाछें श्रीनाथजी की तथा गुरुन की यथाशक्ति भेट काढें. और श्राद्धादिक में वैष्णवकों न लिवावे. और सदा जाके घर लेत होय सो ता भांतिसों लिवावे. और लौकिक भावते ब्राह्मण और जाति को लिवावे. और अलौ-

किक कार्य में वैष्णव को करे. तहां और के करेको प्रयोजन नहीं. और लौकिक में कोइ जाति को बुरो माने तो वाकों प्रसाद दैकें प्रसन्न करे, तातें अपने मार्ग की निंदा न करावे, सो काहेतें जो सुदृढ भक्ति भई नाही हे. तातें अपने मनमें निंदाते दुःख होय. दृढ भक्ति वारेकों तो कछु लौकिक वैदिक सो-होय नहीं. वाको तो केवल अलौकिक ही ते काम हे, या प्रकारसों रहनों, और जहां तांई भक्ति दृढ नहीं भइ हे. तहां तांई यह जाने जो मेरी भक्ति में कोई प्रतिबंध न करे. और लौकिक वैदिक करे तातें श्री-ठाकुरजी की सेवा निर्विघ्नतासें करे. और मनमें खेद होय सो न करे, और पुष्टिमार्गियसों कोई वात को अंतराय न राखे. और कपट छल भगवदीयसों न राखें. और लौकिक वैदिक कार्य हीन जानें, सो यह पुष्टिमार्ग को रीति सर्वोपर जाने. और इन इन्द्रि-यन के विषयादिकन तें श्री ठाकुरजी को आवेश जातो रहे. और कहे हें "विषया क्रांतदेहानां नावेशः सर्वथा हरेः" सो या प्रकार करिकें श्रीआचार्यजी

महाप्रभुजी कहे हें, सो सेवा बराबर धर्म नहीं सो वैष्णवकों बहुत कठिन हे. और वैष्णव को विवेक विचारसों सर्व कार्य करनों. देश काल समय को विचार राखनों. बुरे के निकट न जानों. और वासूं संभाषणहुं न करनों. सेवा बने सो उत्तम काल जाननों और ब्रजभूमि को उत्तम ते उत्तम भूमि जाननो, जो जहां श्रीपुरुषोत्तम की नित्यलीला स्थिति हे. और रात्रिकों शयन करनो तब प्रातःकालकी सेवा को स्मरण करनों. और श्रीठाकुरजी के श्रीमहाप्रभुजी के कीर्तन करि सोवनो. और कीर्तन न आवे तो, श्रीमहाप्रभुजी को, श्रीगुसांईजी को तथा गुरुन को स्मरण करिकें सोवनो. सो सबन के नामतें सघरो दिन खोटो खरो बोल्यो होय तो सब सुखरूप होय जाय. जैसे रात्रि को दूध लियेतें सगरे दिन को प्रसाद दूधवत् गुन करे. सोवत समय चरणामृत लेके सोवे तो वाकों दुःस्वप्न नहीं आवे. और नींद तो मृतक बराबर हे, तातें श्वास आवे तथा नहीं आवे, तातें चरणामृतकों सबंध मुख में बन्यो रहे, तो सर्वथा दुर्गति

न पावें. या प्रकारसों वैष्णव या काल में सावधान होयकें रहे तब बचे. या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हें. ।

इति श्रीगोकुलनाथजीकृत तेइसमो वचनामृत सपूर्णम्.

वचनामृत चौबीसमों

अब श्रीगोकुलनाथजी चौबीसमों वचनामृत कहत हें:-जो वैष्णवकों यह भय राखनो. जो मेरी भगवत् सेवा में अंतराय न होय, यह भाव राखनों. और सेवा के अर्थ लौकिक कुटुम्ब को, परोसी तथ-राजा देश कालको सघरो दुःख सहनों, और जाना नो जो यह दुःख हे, सो तो देह संबंधी हे. सो कोई कहा करेगो. और भगवत् सेवा मोकूं चाहिये, और दुःख सुख तो जगत में जहां जायगो तहां याको सिद्धि हे परंतु भगवत् सेवा तो बहुत दुर्लभ हे. जब प्रभु अत्यंत कृपा करें तब भगवदीय को और सेवा को संयोग बने. और अपने मन में यह जाने जो जहां तांई यह देह हे तहां तांई यह दुःख हे, और लौकिक

दुःख सुख मेरे संग नाहीं हे. तातें दुःख, सुख पायके सहन करे. और कहें जो यह सेवा मेरे जन्म जन्म को कल्याण करत हे. तातें या जन्म में दुःख भयो तो कहा ! परंतु सेवा तो बनत हे, और लौकिक वैदिक के लिये आपुन देश देशन में कितनों दुःख सहत हैं. सो तो तुच्छ पदार्थ हे. और यहां अलौकिक भगवत् सेवा हे, ताके अर्थ जो दुःख पावें तो आनंद पायकें सहनों. और भगवत् सेवा मन लगायके करनों. और श्रीठाकुरजी को सामिग्री तथा नेग बांधे, सो नेग रंचकहु घटावे नहीं तातें अपनी सामर्थ्य देखिकें नेग बांधे. और नेग बांधे पाछे न करे तो प्रभु नेग विना दुःख पावें यह भक्तिमार्ग में नेग की प्रभु आशा करत हें, सो लौकिक दृष्टांततें जाननों, जैसें कोई वैष्णव-कों महाप्रसाद लिवावे, सो वाको एक दिन घटतो धरें तो वह भूखो रहें, ता भावतें विचारिकें नेग बांधनो. और जो कोई वैष्णव सेवा में चतुर होय तो वाको सेवा में राखनों और काहुकों सामिग्री आछी आवें. कोई ओडो आछी बाँधि जाने. कोई सुन्दर

माला गूंथ जानें. और कोई सुगन्ध, अत्तर, फुले-
ल. अगरजा, चेवा और रीति भांति जाने वाको
सेवा में राखे. और कोइ कुल्हे, टिपारो, वस्त्रन में
बांधि जानें तो तिनसों करावे. सो या प्रकारसों प्री-
तिपूर्वक सेवा करे. और जामें गुण बहुत होय और
प्रीति रंचकहु न राखे, तासुं कछु न करावे. और
थोरो गुण होय, प्रीति तें करे, तासों सेवा करावे.
अपने को कछु गुण आवत होय, और कोई वैष्णव
श्रद्धापूर्वक पूछे तो कहें परंतु ठौरठौरआअतें न कहेत
डोले. और अपने गुन को अभिमान न करे, प्रीति
पूर्वक वैष्णव को बतावनो, और आपतें नयो होय तो
वाको आछो जाननो, और आपुनतें प्रथम हुए वै-
ष्णव की कानि राखनी. और जाने जो ये वैष्णव हे,
और मोतें बडो बडभागी हे, और प्रभुन ने इनको
बालपने ते अंगीकार कियो हे. और भगवदधर्म में
छोटो बडो न जाने, कृपाकूं देखें. और काहु को
शरण आवतही आछी दिशा होत हें. और काहुकों
जन्म व्यतीत होय जाय. तोहू कछु न समझे तातें

या मार्ग में बडे छोटे को प्रमान नाहीं. जो या मार्ग में तो कृपा ही को विचार हे. और पुष्टिमार्ग में शरण आवे ताको सुजाति जाननो, और तें अपनो धर्म गोप्य राखनो, और जो वस्तु पुष्टिमार्ग में अंगीकार कीनी हे, ताही को समर्पे, सोइ महाप्रसाद लेय. और तरबूजा, मूली, गाजर इत्यादिक निषिद्ध हें, और वेद में हुं वर्जित हें, तातें कबहु न लेय. और शास्त्र में वेंगनहुं निषिद्ध हे, परंतु या पुष्टिमार्ग में श्री जगन्नाथजी की आज्ञा तें लीने हें. ताते वेगन धरिकेलेय, और लोन डारो शाककूं और खीर कूं शास्त्र में सखडीं में कह्यो हे, ताको अनसखडी की रीतिसों करे. शकादिक में अग्नितें उतारि के पाछे लोंन डार्यो चाहिये. थोरो बने तो चिंता नहीं. परंतु पुष्टिमार्ग की रीतिसों करनो. पुष्टिमार्ग की रीत बहुत बडी हे. दुसरे के मार्ग की क्रियासों कछु फल नाही हे. सो श्रीगीताजी में कहे हे. ॥

"स्वधर्म निधनं श्रेयः परधर्मोः भयावहः"

सो परायो धर्म भय उपजावे हे. तातों कछु

कार्य न होय. और अपने पुष्टिमार्ग में रीति प्रमान करे भले थोरोही करें, और श्रीआचार्यजी महाप्रभु-जी को आश्रय करे तो वा धर्म ते प्रभु प्रसन्न होय. उत्साहसों बने सो करे. काहुकी लौकिक प्रतिष्ठा देखि के वाकी बराबरी न करें. तब वामें श्रीआचार्यजी कानितें श्रीठाकुरजी प्रसन्न होय, और प्रभु प्रसन्न न होय तब याको कियो कहा ? ताते प्रभुन को तो एक मनही की अपेक्षा हे, और श्रीठाकुरजी के तो कोई बात की घटती नाहीं, वैष्णवको जैसो भाव होय तैसो अंगीकार करें, तैसोइ दान करें, तातें वैष्णव अपनी योग्यता छोडि श्रीआचार्यजी महाप्रभु-जीकों आश्रय करें, और लौकिक वैदिक में लोक-निष्टा दिखाय अपनों धर्म गोप्य राखें, तहां लौकिक व्योहार बने तो करे जानों, तामें जो भगवद् इच्छातें आय प्राप्त होय तामे ते श्रीनाथजी को अंश प्रथम काढिये, तापाछें गुरून को काढिये, दोउ थैली न्यारी करिके धरत जैये तथा गाम में कोई वैष्णव के पास धरत जैये, अपने घर द्रव्य को कबहु न

धरिये, सो कहा जाने कोइ समय कैसी कठिनता आय पडे, तो छिन में धर्म छुटि जाय. यह द्रव्य कोई समय भगवत्धर्म को नाश करे, सो गाम में कोई प्रमाणिक वैष्णव होय ताके घर धरत जैये, जब श्रीजी को भेटिया आवे तब तत्काल दे देय. यह न जानें जो मेंही जाउंगो. और गाम में गुरु होय तो भेट काढि भेट करि आवे, और दूसरे गाम में होय तो हुंडी करिके पठावे. और कोई वैष्णव भरोसे को होय तो वाके हाथ पठावे. सो काहेत जो या काल में द्रव्य और परस्त्री ए भगवदधर्म को नाश कर्ता हे. सो श्री भागवत में हु कह्यो हे, जो काष्ट की पूतरी को संग न करनों. क्योंकि चित्र लिखी पूतरी को देखेतें मन में विकार होत हे. तातें पराई स्त्री को सर्वथा त्याग करनों. और वाको कालरूप जाननो, और श्री गोवर्धननाथजी के तथा अपने गुरुन के दर्शन की सदा सर्वदा आरति राखनों. और यह न जानन्नो जो में दोय चारि चेर होय आयो हुं. सो ज्यों ज्यों दर्शन करे त्यों त्यों अधिक ताप करनों.

जाने जो दर्शन करवे कों फल कृपा करिके दीनों है. और याही भांति श्रीयमुनाजी के जल पान को हु ताप राखनो, और श्रीगोवर्धननाथजी के टहेलवा व्रज में रहत हैं, तिनसों दोषभाव न राखनो. जो काहेतें, कि वैदिक शास्त्र में कहे हैं, जो यह जगत श्रीठाकुरजी को क्रीडाभांड हैं, सो सघरो जगत काष्ट की पुतरीवत् हैं, सो प्रभु उनको नचावत है, तैसे नाचत हैं. काहुको दोष न देखें. और आछी वात होय सो समुझावे. और न समझत होय तो भगवद इच्छा जाने, तातें दोष बुद्धि न राखे. क्यों जो वे व्रज संवंधी हैं, सो प्रभु विचारे विना प्रभु के गाम में प्रभु के पास कैसे रहें ! तातें उनको अलौकिक करि जानें, उनकी सेवा टहेल वने सो करें. और आप उत्तम स्थल में अपराध को भय राखे, और ठौर के अपराध तो उत्तम स्थल में गये ते छूटें, और उत्तम स्थल को पाप वज्रलेष होय जाय, सो कैसें छूटे, तातें अपराध को सर्वथा भय राखें, सो उत्तम स्थल को भय राखिकें खोटी बात न करें, और काननतें सुनेहु

नाहीं, तब भाव दृढ होय, तब प्रभु प्रसन्न होय. और श्रीभागवत के एक दोय अध्याय को पाठ नित्य करनो, और एतन्मार्ग के ग्रंथन की टीका को श्रवण करे विना प्रभुन मे मन लागे नाहीं, सो काहेते जो ग्रंथन विना पुष्टिमार्ग के सिद्धांत को न जाने, और वैष्णवन के मुखते सुने तव श्री आचार्यजी तथा श्री-गुसांईजी के पुष्टिमार्ग को सिद्धांत सेवा क्रिया को संपूर्ण अलौकिक ज्ञान होय तब प्रीति वढे, और जब प्रीति उपजी तब याको संपूर्ण कार्य सिद्ध भयो, और श्रीसुबोधिनी जी श्री वल्लभकुल वांचे सो सुने, तथा निवेदनी के मुखतें सुने, सो लीला को भाव अपने हृदेय में शुद्ध करिके राखे, काहेतें जो भगवद माहात्यम जाने विना प्रीति न होय, और सुने विना ज्ञान न होय. तातें भगवद्वार्ता श्रवण अवश्य करे, सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी नवरत्न में कहे हें, जो हम निवेदन किये हें, परंतु भगवदी के संग विना, श्रवण किये बिना, ज्ञान न भयो तो प्रीति न होय, तो प्रभु प्रसन्न न होय, जैसे जगत में को ज्ञान हे, तातें

द्रव्य में प्रीति हे, काहेतें जो द्रव्य के गुण के ज्ञान ते संसार में सर्व ज्ञान होत है, सो याही ते होत है, तैसेइ प्रभुन के गुण गानते प्रभुन को ज्ञान होय, सो सर्वोपरि जानि प्रीति होय, ताते संपूर्ण अलौकिक कार्य सिद्धि हाय, और एतन्मार्ग के अष्टछाप के कीर्तन गावे तथा सुनिवे में प्रीति राखे, सो काहेते जो पुष्टिलीला के दर्शन अष्टछाप में हें, और अन्य मार्ग के कीर्तन जुग जुग में अंश कलातें कृष्ण प्रगट होत हें तिनके हें, तातें यह जानिकि अन्यमार्गीय के कीर्तन न सुनें. अपनें श्रीठाकुरजी की लीला के नहीं हें, यह जानि के कोई अन्यमार्गीय एतन्मार्ग के कीर्तन अष्टछाप के गावें तिनको हू न सुनें, और जैसे जमुना जल और के पात्र में होय तो पुष्टिमार्गीय कैसें पीवें ? जो पीवे तौ भ्रष्ट होय, तैसेंई अष्टछाप के कीर्तन वैष्णव के मुखते सुनें, और श्रीठाकुरजी की सेवा तथा दर्शन करिकें निकसें तब पीठ फेरिकें बाहिर न निकसें, क्यों जो अपराध पडे हे तासो दंडवत् करें, ता पाछें और ठौर जाय, तब अपराध निवारण

होय, और श्रीठाकुरजी के सनमुख दंडवत् करे परंतु श्रीठाकुरज़ी के पीठ पाछें दंडवत् न करे, तहां बैठेंहु नहीं, सो काहेतें जो श्रीठाकुरजी के पीठ पीछें बहिर्मुखता हे, सो याकों होय, सो दामोदर लीला के प्रसंग में श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी कहे हैं, जो श्रीयशोदाजी श्रीठाकुरजी को पकरन को आई तब श्रीठाकुरजी भाजे, ज्यों ज्यों पीठ दीठी, तब तब क्रोध वढ्यो, और स्नेह छुट्यो, तब श्रीठाकुरजी बंधे, तातें प्रभुन के सनमुख बैठनों, और अपने गुरुन को स्वरुप अपने हृदय में राखि दंडौत करि विज्ञप्ति करे, जो महाराज मे संसार समुद्रमे बूडत हों, ताते आप वांह पकरि कें काढो तो निकसि आऊं और मेरी सामर्थ्य तो निकसिवे की नाहीं हे, सो में आपकी शरन हो आपकी सेवाकों चोरहूँ, और साधन करिकें हीन हूं तातें आपके शरन बिना, आश्रय बिना और उपाय नहीं हे, सो मोंसे पतित को कृपा करिके उद्धार करिवेवारे आपुही हो, सो आप कृपा करोगे, तब प्रभु प्रंसन्न होंइगे, और श्रीठाकुरजी अपने घरमें बिराजे हें, तिन

में गुरुभाव प्रभु भाव दोउ राखे. और मुखारविंदरूप श्री आचार्यजी महाप्रभुजी हें, या भावतें पुष्टिमार्ग में भावही मुख्य हे. सो लौकिक दृष्टांत तें कहत हें, जो एक देह संबंधी हे. एक भाव संबंधी हे. अपनी बेटी हे सो देह संबंधी हे, और वहु हे सो भाव संबंधी, अपनी बेटी अपने देह तें प्रगटी हें, परंतु पराये घर जाय, और पाली पोषी हे तोहु अपने घर की नांहि हे. और वहु, काहु की बेटा हे. सो भाव संबंध ते घर में आई, और मालिकनी भई का हे तें ज्यांहां भाव संबंध हे, सो दृढ हें. जेसे देह सं- बंधी यादव तिनको क्षय भयो, और भाव संबंधी जे व्रजभक्त तिनको अपनपो दीयो तेसेंई श्री आचार्यजी पुष्टिमार्ग प्रगट करिकें जीवनकुं ब्रह्म- संबंध कराये, और भाव संबंध दृढ करि दीयो. सो एसो दान भयो हे परंतु पतिवृत्त धर्म में चले, तो प्रभु प्रसन्न होय. तेसेंई वैष्णव साक्षात् श्री पूर्णपु- रुषोत्तम को अपनें पति जानें, और इनही के सेवा स्मरण में तन, मन धन समर्पन करे तो प्रभु प्रसन्न

होंय. सो या प्रकार कृपा करिके श्रीगोकुलनाथजी आप कल्याण भट्ट से कहे हें. और पाछें यह आज्ञा कीये हें, जो यह पुष्टिमार्ग को सिद्धांत अत्यंत गोप्य हे. सो काहु के आगे मति कहियो. और केवल अनन्य भगवदीय होय, तासों कहियो. यह हमारी शिक्षा हे. सो तुम जानोगे. ।

इति श्रीगोकुलनाथजी कृत चौवीसमो वचनामृत संपूर्णम्.

समाप्त.

श्री गोकुलेशाष्टोत्तरशत नामावलि ॥

श्रीगोकुलेश मत्स्वामिन् नामानि तव तुष्टये।
कथयेतव दासानां सर्वकामफलप्रद ॥१॥

१ श्रीगोकुलेशाय नमः । २ श्रीरुक्मिणीनन्दनाय नमः। ३ श्रीगिरिधरप्रियाय नमः । ४ श्रीगोविंदमनोरञ्जनाय नमः ५ श्रीबालकृष्णानुजाय नमः ६ श्रीगोकुलनाथाय नमः । ७ श्रीरघुनाथाग्रजाय नमः । ८ श्रीयदुनाथप्रीतिकर्त्रे नमः । ९ श्रीघनश्यामपोषकाय नमः ।१० श्री पार्वतीप्राणपतये नमः ११ श्रीविट्ठलरायजनकाय नमः । १२ श्रीगोवर्द्धनेशलालि

तायनमः। १३ श्रीव्रजपति'लाड'कर्त्रे नमः। १४ श्रीधर्मस्थापकाय नमः। १५ श्रीगोकुपतये नमः। १६ गोवर्धनगमनोत्सुकाय नमः। १७ गिरिवरनमनकर्त्रे नमः १७ अतिप्रसन्नमुखारविंदाय नमः। १६ भक्तनयनाह्लादकाय नमः। २० भक्तमनोरथपूरकाय नमः। २१ श्रीगोकुलागताय नमः। २२स्वप्रभुनमनकर्त्रे नमः। २३ भक्त प्रियाय नमः। २४ आचार्यनामार्थे प्रकटो करणाय नमः। २५ पितामहचरणासक्तये नमः। २६ पितामहस्वरूपज्ञापकाय नमः। २७ पितृपादसरोजनम्राय नमः। २८ पितृदत्तुलसीमालाधारकाय नमः। २६ उर्ध्वपुण्ड्रधारकाय नमः। ३० षण्णवतिमुद्रांकितविग्रहाय नमः। ३१ भव्यमूर्तये नमः। ३२ आकषर्णनेत्राय नमः। ३३ कर्णशोभितकुण्डलधारकाय नमः। ३४ श्रीहस्तेजटितकंकणधारकाय नमः। ३५ अङ्गुलीषु सुमणिजटितमुद्रिका धारिणे नमः। ३६ श्रीकण्ठे मुक्तामालाराजिताय नमः। ३७ कृष्णदास्यप्रियाय नमः। ३८ निजजन्मोत्सवकर्त्रे नमः। ३६ स्वजनहितमङ्गलाचरिताय नमः। ४० व्रजमङ्गलाचरिताय नमः। ४१ व्रजमङ्गलदायकाय नमः। ४२ पूर्वोक्तसृष्टिपूजादिकर्त्रे नमः। ४३ महोदाराय नमः। ४४ सकलद्विजदक्षिणादात्रे नमः। ४५ निजजनहृदयानन्दाविर्भावकर्त्रे नमः। ४६ नीरांजनवारितभक्तनिरीक्षकाय नमः। ४७ ताम्बुलदात्रे नमः। ४८ हृष्टमानसाय नमः। ४६ आचार्य-

सिद्धान्तव्याख्यानकर्त्रे नमः । ५० स्वमतस्थापकाय नमः । ५१ भागवतार्थाचरिताय नमः । ५२ पितुराज्ञया यमुनाष्टक-शेषव्याख्यानकर्त्रे नमः । ५३ पितृवाक्परिपालकाय नमः । ५४ शान्तमूर्त्तये नमः । ५५ महाकारुणिकाय नमः । ५६ निजजनोपरिकृपादृष्टिकर्त्रे नमः । ५७ अत्युदाराय नमः । ५८ याचकजनमनोरथपूरकाय नमः ५९ गोकुलनाथाय नमः । ६० गोवल्लभाय नमः । ६१ गोवर्धनेशप्रियाय नमः ६२ श्रीमद्वल्लभकुलमण्डनाय नमः ६३ गोस्वामिने नमः ६४ वाक्सुधावृष्टिकर्त्रे नमः । ६५ चर्विततांबुलभक्तदात्रे नमः । ६६ सकलभूषणभूषिताय नमः । ६७ मनोहररूपाय नमः । ६८ निजजनप्राणवल्लभाय नमः । ६९ अग्निहोत्रादिकर्मकर्त्रे नमः ७० त्रिवारं सन्ध्यावन्दिने नमः । ७१ कर्ममार्गप्रवर्त्तकाय नमः ७२ भक्तिमार्गतात्पर्याय नमः । ७३ 'ठकुरानीघाटे' स्नान-कर्त्रे नमः । ७५ निजमन्दिरगताय नमः । ७६ भगवद्गुणगानश्रवणकर्त्रे नमः । ७७ 'सारङ्गी' वाद्यप्रियाय नमः । ७८ नीराजनकारिणे नमः । ७९ 'चिद्रूप' मतखण्डनाय नमः । ८० मालादृढस्थापकाय नमः । ८१ पृथ्वीशाज्ञोल्लङ्घनाय नमः । ८२ तत्समीपे काश्मीरगताय नमः ८३ काश्मीरपावनकर्त्रे नमः । ८४ तदाज्ञया 'सोरम' वासनिर्धारकर्त्रे नमः । ८५ पुनर्गोकुलगताय नमः । ८६ सपरिवारं वाराहक्षेत्रे गङ्गासमीपे गताय नमः । ८७ स्वभ्रातुरासुर-

* श्री हास्यप्रसङ्गायनमः ॥७४॥ *

ग्रामोहं श्रुत्वा गोकुलागताय नमः। ८८ दामोदरादिसमाधानकर्त्रे नमः। ८९ नवनीतप्रियमन्दिरगताय नमः ९० साष्टाङ्गदण्डवत्प्रणामकर्त्रे नमः। ९१ प्रभुचरणेतुलसीदलस्थापकाय नमः। ९२ पितामहपितृसमीपे भ्रातृपादुका स्थापकाय नमः। ९३ गूढभावप्रकटीकर्त्रे नमः। ९४ महानुभावाय नमः। ९५ पुनः ,सोरम' पादधारिणे नमः। ९६ किञ्चित्कालं तत्र निवासकर्त्रे नमः। ९७ सकुटुम्बं त्वरितगोकुलगताय नमः। ९८ यमुनास्नानकर्त्रे नमः। ९९ गोदानकर्त्रे नमः। १०० यमुनारसभोगकर्त्रे नमः। १०१ आनंदपूरिताय नमः। १०२ आबालबृद्धं तुलसीमाला तिलक धारिणे नमः। १०३ नित्यं श्रीगोकुलस्थानविराजिताय नमः। १०४ पुष्टमार्गभाव भावनैकदक्षाय नमः। १०५ ज्ञानगूढहृदयाय नमः। १०६ हृमद्वदनपङ्कजाय नमः। १०७ मनोज्ञमधुराकृतये नमः। १०८ ताताज्ञकपालनतत्पराय नमः।

इति गोकुलाधीशनाम्नामष्टोत्तरं शतम्।
सर्वदा चिन्तनीयं हि सर्वं चिन्ता निवृत्तये ॥१॥

इति श्रीमद्दासानुदासहरिदासविरचिता श्री गोकुलेशाष्टोत्तरशतनामावलिः सम्पूर्ण ॥

॥ समाप्त ॥

॥ अथ माला प्रसंग के कवित्त ॥

कबिता:—शाह कही सो तैं न करी, करी सो बेद पुराण-

न भाखी। माल तिलक जनेऊ के कारण, ऐंड। पैंडन नाखी ॥ श्री पत कहे ज़हांगोर के पत, जेते उमराव तेते सब साखी । श्री विट्ठलनाथ जू के श्री गोकुलनाथ जू सब हिन्दुन की पत राखी ॥ जब विलम्ब नहीं कियो जीव जग महा काल वस। जब विलम्ब नहीं कियो वाद वादी आये धस ॥ जब विलम्ब नहीं कियो आगरा द्वन्द मचायो। जब विलम्ब नहीं कियो मालरख धर्म वढ़ायो। कृपानाथ असरन सरन विरहै विकल परयो, सो विलम्ब कारन कवन ॥२॥ काहु कहे दिनेश ईश, काहु कहै गनेश शेष काहु कहे गया प्रयाग, काहु कहे गोदावरी काहु कहे जोग जाग. काहु कहे विराग त्याग चण्डिका पुंज, बाँटत न्यौछावरि कहे नारायण ऐतेन में, काहु सों नेह नाहीं निन्दक जन भले कहे मेरो मत वावरी। श्री गोकुलेश भूपसासन मेरे सिर सदा रहो रोझे पावरी ॥३॥ औगन स्वाँग धरे सब पेट के, एक हकुमत जिद रहाला। तें कुल जगत धर्म तज्यो, सिद्ध साधक भूल गयो मतवाला ॥ खेदत हु धनि धनि कहे, प्रेम पलक सों भेटि रसाला। श्री विट्ठलनाथ के श्री गोकुलनाथजु, तुमने पहरी जग में जस माला ॥४॥ मति जानो रव्याल श्री गोकुलनाथ जी की माला हे, वखानेहु वेद मरजाद हु वखानो है। डारे गुद्दी बीच माला अमृत रसाला है, वुलाए जहाँगीर नें जाय के जुवाव दियो। हिन्दून की हद्द राखि श्री गोकुलनाथ प्रतिपाला हैं, प्राननाथ कहे बात सुनो सब कान दे। मत

जानो ख्याल श्री गोकुल नाथ जु को माला है, ।।५।। गोकुल का फकीर देखो आये कौन भाव से, ते डारे गुद्दी बोच गुंज और वनमाला हे। माँगत हु माला वो देता है जीव कुं, करे याद साँई कूं संग नन्दलाला है। हुआ है निडर मैं तो देता हुँ दुसाला, मेरे माला बन्द औरंगे रहे साला हे । प्राननाथ बात कहे सुनो सब कान दे, मत जानो ख्याल श्री गोकुल-नाथंजु को माला है ।।६।। टेक की टेक की टेक टरे गिरि टेक टरे तो टरे धुरुब तारो, श्री गोकुलनाथजु माला तजे तों शेष न धरे शीष भू भारो। पौन थके तो थके तो थके ब्रज को पन कौन करे महि मेरत न्यारो, श्री वल्लभ वंश विहारो कहे कवि जागत हैं जगमें जस थारो ।।७।। शेष सुरेश दिनेश कहे, सुनही शाहे गोकुल की रजधानी। चिद्रुप तों बे गरज्यो में द्विजराज करी सो तिहुँपुर जानी ।। तोपें यह बात करी कल्यान। महिपति; आगे जु जाय बखानी। आज अब यह मण्डल माँझ रह्यो, मुख श्री गोकुल नाथ के पानी।८। श्री वल्लभ के वंश मांझ प्रगटयो प्रभाकर, सो श्री विट्ठलेश नन्दन नवल गोकुलेश जु। दूर कियो तिमिरि अज्ञान कों जगती ते, कीर्ति वरनी न जाय मोपे विशेष जु ।। सुक मुनि शारद नारदरटत रहें व्याजि, पावत न पार शेष जु। तेरे गुन गाये ते मिटतत्रि विधताप, होत है सदा मन चरन नरेश जु ।।९।। श्री गोकुल नाथ रमे जियमें, कियो श्री विट्ठलनाथ को नाम उजारो, हाली मवाली करे प्रणाम श्री गोकुलनाथ नाथ

व्रज के मास सूं देखनो तीज तेरस और पन्चमी पून्यो एक जानें । चौदश अमावस या वचनामृत में विश्वास राखिकें प्रयाण करे तो मनोरथ सिद्ध होय ।

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	का.	मा.	
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	बहोत सुख होय, क्लेश न होय अर्थ पूर्णहोय
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	महाभारत होय, जीव नाश होय अशुभ
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अर्थ पूर्ण होय, मनोरथ, कामना पूर्ण होय.
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	क्लेश जीवनाश होय, कुशलसे घर न आवे
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	वस्तु लाभ होय, मित्र मिले, व्याधि मिटे
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	महाचिन्ता वियोग होय कदाचित् घर आवे
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	सौभाग्य, रत्न सहित भली भांति घर आवे
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	मिलवौ न होय, जीवनाश होय, बुरी होय
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	आशा पूर्ण, सौभाग्य पावे: कामनासिद्धिहोय
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	सौभाग्य पावे, दिन बहुत लगे, घर आवे
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	क्लेश होय, जीव नाश नहीं, सौभाग्य पावे
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	मार्ग में सिद्धि होय, मित्र मिले, धन मिले